तुलसी सौरभ

UNIVERSITY OF KERALA
कर्मणि व्यज्यते प्रज्ञा

केरल विश्वविद्यालय प्रकाशन

तुलसी सौरभ

(Hindi)
THULASI SOURABH
Poetry Collection

Compiled by
a committee appointed by
University of Kerala

Printed at
Valsa Printers, Trivandrum—695 014

Published 1981

Price Rs. 3/-

Published by
Chemmanam Chacko
Director
Department of Publications
For the University of Kerala
Trivandrum

तुलसी सौरभ

प्रकाशन विभाग
केरल विश्वविद्यालय
तिरुवनन्तपुरम
१९८१

Compiled by
The Board of Studies in Hindi (Pass)
University of Kerala

मुद्रण :

वल्सा मुद्रणालय, तिरुवनन्तपुरम

दो शब्द

केरल विश्वविद्यालय की बी० ए० कक्षा के ऐच्छिक विषय 'हिन्दी भाषा व साहित्य' के पाठ्यक्रम के अन्तर्गत गोस्वामी तुलसीदास के काव्य का कोई अंश अनिवार्यतः पठनीय है। पिछले कई वर्षों से रामचरितमानस का बालकाण्ड या अयोध्याकाण्ड उपरोक्त पाठ्यक्रम में बारी-बारी से रहता आया है। अब चूँकि अनेक अध्यापक-बन्धुओं ने यह निर्देश रखा था कि केरल विश्वविद्यालय अपने प्रकाशन विभाग की ओर से तुलसीदासजी की कविताओं का ऐसा कोई संकलन निकाले जो उनकी विभिन्न शैलियों का प्रतिनिधित्व करे और जिसका मूल्य भी कम रहे, इसलिए पाठ्य परिषद ने 'तुलसी सौरभ' प्रस्तुत किया है। इसमें रामचरितमानस के बालकाण्ड तथा अयोध्याकाण्ड से एक-एक भाग और कवितावली और विनयपत्रिका के कुछ पद सम्मिलित किये गये हैं। आरंभ में तुलसीदासजी के जीवन की एक झाँकि और उनकी रचनाओं का संक्षिप्त परिचय और अंत में कठिनशप्दों के अर्थ दिये गये हैं।

आशा है कि 'तुलसी-सौरभ' पाठकों के मन को आमोदित करेगा।

हिन्दी पाठ्य परिषद
केरल विश्वविद्यालय

विषय सूची

तुलसीदास	ix
धनुषयज्ञ	१
वनगमन	१८
लंकादहन	३६
बालछवि	४८
बाललीला	५०
विनय	५२
कठिनशब्दार्थ	५७

गोस्वामी तुलसीदास

गोस्वामी तुलसीदास की जन्म-स्थान के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है। बेनीमाधवदासजी ने अपने 'मूल गोसाई चरित' और महात्मा रघुबरदास ने अपने 'तुलसीचरित' में उनका जन्म-संवत १५५४ और जन्म-स्थान बांदा जिले का राजापुर माना है। किन्तु मिर्जापुर के विख्यात रामायणी पं० रामगुलाम द्विवेदी ने उनका जन्म-संवत १५८९ स्वीकार किया है। सर जार्ज ग्रियर्सन, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल आदि विद्वानों ने भी इसी तिथि को युक्तिसंगत माना है। कुछ लोग उनका जन्म-स्थान सोरों बताते हैं और प्रमाण के रूप में तुलसीदासजी की यह पंक्ति प्रस्तुत करते हैं—'मैं पुनि निज गुरु सन सुनी कथा सो सूकर खेत' (सोरों)।

जनश्रुति यह मानती आयी है कि तुलसीदासजी के पिता का नाम आत्माराम दुबे और माता का नाम हुलसी था। ये सरयूपारी ब्राह्मण थे। तुलसीदासजी का जन्म अभुक्तमूल नक्षत्र में हुआ था। अतः पिता ने अमंगल की आशंका से बालक को त्याग दिया। किन्तु माता ने उसे पालने-पोसने केलिए अपनी दासी मुनिया को दे दिया। पुत्र-जन्म के पाँच ही दिन बाद माता परलोक सिधारीं। पाँच वर्ष तक बालक का पालन-पोषण करने के बाद मुनिया भी चल बसी। अनाथ बालक रोटी केलिए दर-दर भटकता रहा। इसप्रकार उनका बाल्यकाल अत्यन्त कष्टमय रहा।

संयोग से बालक तुलसी बाबा नरहरिदास का कृपा-पात्र बना। उन्होंने उसे अपने पास रख लिया और ज्ञान व भक्ति की शिक्षा दी। वे ही तुलसीदासजी के प्रथम गुरु थे। उन्होंने अपने शिष्य को रामकथा सुनायी

और रामभक्ति का उपदेश दिया। उन्हीं के साथ तुलसीदासजी काशी गये। उन दिनों काशी में शेषसनातनजी नामक महात्मा रहते थे। इन आचार्यों ने उनको वेद, पुराण, दर्शन-शास्त्र आदि की शिक्षा दी। शेषसनातनजी की मृत्यु के बाद भी वे कुछ वर्ष काशी में उपासना और ज्ञान-संपादन में संलग्न रहे। फिर वे अपनी जन्मभूमि राजापुर को लौट आये।

राजापुर में तुलसीदासजी लोगों को राम की कथा सुनाया करते थे। एक बार यमुना पार के दीनबन्धु नामक एक ब्राह्मण ने उन के मुख से राम की कथा सुनी। वे उनकी विद्वत्ता और शील-सौन्दर्य पर मुग्ध हो गये और अपनी लड़की उन्हें ब्याह दी। लड़की का नाम रत्नावली था। रत्नावली में तुलसीदासजी की इतनी आसक्ति थी कि एक दिन भी वे उसका वियोग सहन न कर सकते थे। एक बार वह मायके चली गयी तो वे आधी रात को नदी को तैरकर उसके पास पहुँचे। इस पर क्षुब्ध होकर रत्नावली ने उन्हें भर्त्सना दी—

लाज न लागत आपको दौरे आएहु साथ।
धिक धिक ऐसे प्रेम को कहा कहौं मैं नाथ॥
अस्थि-चर्ममय देह मम तामें जैसी प्रीति।
तैसी जौ श्रीराम महँ होति न तौ भवभीति॥

ये शब्द गोस्वामी के हृदय में चुभ गये। क्षणिक व नश्वर सांसारिक सुखोपभोगों के प्रति उसके मन में वितृष्णा और विरक्ति का भाव उत्पन्न हुआ। श्रीरामजी के वे अनन्य भक्त बन गये। कई वर्ष वे तीर्थयात्रा करते रहे। जगन्नाथ, रामेश्वर, द्वारका, बदरीनाथ, कैलास, मानसरोवर आदि तीर्थस्थानों का उन्होंने भ्रमण किया। बहुत दिनों तक वे चित्रकूट में साधु-संतों की संगति में रहे।

तुलसीदासजी ने अपने सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ रामचरितमानस की रचना संवत १६३१ में अयोध्या में आरंभ की और उसे २ वर्ष ७ महीने में समाप्त किया। अपने जीवन-काल में ही उन्होंने विद्वानों और साधारण लोगों से खूब आदर-सम्मान पाया था। संवत १६८० में उनका स्वर्गवास हो गया।

तुलसीदासजी की कृतियों की संख्या तीस से अधिक बतायी जाती है, किन्तु विद्वानों ने उनके १२ ग्रन्थ ही प्रामाणिक माने हैं।

१ रामचरितमानस

सात कांडों में विभक्त इस बृहत काव्य में श्रीरामजी का चरित वर्णित है। इसका मुख्य आधार अध्यात्मरामायण रहा है। कथा के मार्मिक स्थलों का बड़ा ही हृदयग्राही वर्णन किया गया है। इस में सर्वाधिक महत्व पात्र-चित्रण का है। प्रत्येक पात्र को अपनी श्रेणी के लोगों केलिए आदर्शरूप में चित्रित किया गया है। लोक-शिक्षा की दृष्टि से इस ग्रन्थ का इतना महत्व है कि इसे हिन्दू धर्म का मेरुदण्ड कहा गया है। इसका भावपक्ष जितना सुन्दर है, उतना ही सुन्दर उसका कलापक्ष भी है। इसकी भाषा संस्कृतगर्भित अवधी और मुख्य छन्द दोहा-चौपाई है। इस अमर कृति की गणना विश्वसाहित्य के महानतम काव्यों में की जाती है।

२ विनयपत्रिका

यह रामचरितमानस के बाद तुलसीदासजी की सर्वाधिक लोकप्रिय रचना है। इसकी भाषा व्रजभाषा है। इसमें २७९ पद या गीत हैं। ये पद मुक्तक हैं जिनमें न कोई कथा है, न सूत्रबद्धता ही है। कलिकाल का उत्पीडन असह्य होने पर राम के दरबार में रखने केलिए यह पत्रिका या अर्जी तुलसीदासजी ने तैयार की थी। प्रारंभ के कुछ पदों में गणेश, सूर्य,

शिव, पार्वति आदि देवताओं की स्तुति हैं; कुछ पदों में मन के प्रति उपदेश है; कहीं संसार की असारता का चित्रण है तो कहीं आत्मचरित की ओर संकेत है। कई पदों में ज्ञान, वैराग्य और भक्तिसम्बन्धी विचारों का विशद और सरल रूप से प्रतिपादन किया गया है। विनयपत्रिका में तुलसीदासजी अपने कर्मों को पापपूर्ण और मन को मलिन घोषित करके पतित-पावन भगवान से भक्ति-भाव की याचना और उद्धार की प्रार्थना करते हैं।

३ कवितावली

इसमें राम-कथा का वर्णन है। सात कांडों में विभक्त इस काव्य के छन्दों की संख्या ३२५ है। बालकाण्ड: २२; अयोध्या: २८; अरण्य: १; किष्किन्धा: १; सुन्दर ३२; लंका ५८ और उत्तर: १८३। कवित्त, छप्पय, झूलना आदि छन्दों में कवि ने श्रीरामजी की शक्ति और ऐश्वर्य का ओजस्वी वर्णन किया है। संग्रह-ग्रन्थ होने के कारण कथा-सूत्र शिथिल है और कथा-विस्तार में अनुपात का पालन नहीं हुआ है। प्रस्तुत ग्रन्थ का सबसे बड़ा अंश उत्तर काण्ड है, पर उसमें राम की कथा ही नहीं हैं। किन्तु तुलसीदासजी के आत्मचरित पर इतना प्रकाश डालनेवाली उनकी दूसरी कोई कृति नहीं है। तत्कालीन परिस्थितियों के चित्रण की दृष्टि से भी कवितावली का बड़ा महत्व है।

४ गीतावली

कवितावली ही के समान यह भी रामकथा से सम्बन्धित पदों या गीतों का संग्रह है। यह काव्य सात काण्डों में विभक्त है। पदों की संख्या ३१४ है। कवितावली में मुख्यत: राम की शक्ति और रामचरित की परुष घटनाओं का वर्णन है तो इसमें राम के सौन्दर्य और रामचरित के

कोमल स्थलों का चित्रण है। तुलसीदासजी की कोमल भावनाओं की सबसे मधुर अभिव्यक्ति इसमें हुई है। उन्होंने व्रजभाषा का संपूर्ण माधुर्य इसमें उँडेल रखा है।

५ दोहावली

दोहों की संख्या ५७३ है। नीति व भक्तिसम्बन्धी भावों के अतिरिक्त तत्कालीन परिस्थितियाँ और आत्मचरित के कुछ अंश भी इन दोहों के विषय हुए हैं।

६ कृष्णगीतावली

पदों की संख्या ६१ है। व्रजभाषा में रचित इन पदों में श्रीकृष्ण की लीलाओं का सरस और मनोवैज्ञानिक वर्णन मिलता है।

७ रामलला नहछू

इसमें राम का नहछू वर्णित है। छन्द-संख्या २० है। भाषा ठेठ अवधी है।

८ पार्वति मंगल

इसका वर्ण्य विषय शिव-पार्वती का विवाह है। छन्द-संख्या: १६४. भाषा: पूर्वी अवधी।

९ जानकी मंगल

वर्ण्य विषय: सीता-राम का विवाह। छन्द-संख्या: २१६. भाषा: अवधी।

१० बरवै रामायण

इसमें रामकथा वर्णित है। यह सात काण्डों में विभक्त है। स्फुट

छन्दों के इस संकलन के कथा-विस्तार में क्रमबद्धता नहीं है। छन्द-संख्या: ६९. भाषा: अवधी।

११ वैराग्य संदीपनी

जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, इसमें वैराग्य और भक्ति का उपदेश है। इस ग्रन्थ के चार विभाग हैं—मंगलाचरण व वस्तुसंकेत, सन्त-स्वभाव-वर्णन, सन्त-महिमा-वर्णन और शांति-वर्णन। अवधी में रचित इस ग्रन्थ में कुल ६४ दोहे, २ सोरठे और १४ चौपाइयाँ हैं।

१२ रामाज्ञा प्रशन

इसमें रामकथा वर्णित है। सात सर्गों में विभक्त इस ग्रन्थ के प्रत्येक सर्ग के सात सप्तक और प्रत्येक सप्तक के सात दोहे हैं। फल-विचार के लिए ग्रन्थ खोलने पर जो दोहा मिलता है, उससे शुभ या अशुभ का संकेत प्राप्त होता है। दोहे का पूर्वार्द्ध रामकथा का कोई सन्दर्भ है तो उत्तरार्द्ध उसके शुभ या अशुभ फल का वर्णन है। भाषा अवधी है किन्तु यत्र तत्र व्रजभाषा का मिश्रण है।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि तुलसीदासजी हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। उच्चादर्शों की स्थापना, भावों की गरिमा, कथा के मार्मिक प्रसंगों की मौलिक उद्भावना, चरित्र-चित्रण-पटुता, हृदय के गहरे और सूक्ष्मभावों का प्रभावोत्पादक वर्णन, उक्तिवैचित्र्य, रसों और अलंकारों की समुचित योजना, रचना-शैलियों की विविधता और प्रौढता, भाषा पर पूर्ण अधिकार आदि काव्य-कला की सभी दृष्टियों से हिन्दी के कवियों में तुलसीदासजी अप्रतिम हैं। अवधी और व्रज दोनों भाषाओं पर उनका संपूर्ण और समान अधिकार था जबकि न सूरदास का अवधी पर अधिकार था न जायसी का व्रजभाषा पर।

गोस्वामी तुलसीदासजी न केवल लोकप्रिय कवि थे, वरन् अपने समय के सर्वाधिक महापुरुष थे। सर जार्ज ग्रियर्सन ने उन्हें **'बुद्धदेव के बाद** सबसे बड़ा लोकनायक' कहा है। इस लोकनायकत्व का आधार है उनकी युग-चेतना और समन्वय-बुद्धि। उन्होंने जिस हिन्दू समाज को देखा था, वह शैव, शाक्त, वैष्णव जैसे भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों में बँटा हुआ था। देश भर में जाति-पाँति की भेदभावना प्रबल थी और धार्मिक मिथ्याडंबरों तथा कुरीतियों का बोलबाला था। हिन्दू जनता के वैभव को हानि और स्वाभिमान को क्षति पहुँची थी। तुलसीदासजी ने ऐसी निराश व कर्तव्य-विमूढ जनता के उदास मानस में उत्साह और विश्वास भर दिया, आशा का संचार कर दिया। उन्होंने भारतीय संस्कृति के परस्परविरोधी दीखनेवाले भिन्न-भिन्न तत्वों में समन्वय स्थापित किया। यह समन्वय है लोक और शास्त्र का, भक्ति और ज्ञान का, वैराग्य और गार्हस्थ्य का, सगुण और निर्गुण का, वैष्णव और शैव का। तुलसीदासजी के व्यक्तित्व की महानता और कृतित्व की सफलता का रहस्य सचमुच इसी समन्वयवादिता में है।

★ ★

धनुष-यज्ञ

बोले बंदी बचन बर सुनहु सकल महिपाल।
पन बिदेह कर कहहिं हम भुजा उठाइ बिसाल ॥

नृप भुजबलु बिधु सिवधनु राहू। गरुअ कठोर बिदित सब काहू ॥
रावनु बानु महाभट भारे। देखि सरासन गवँहिं सिधारे ॥
सोई पुरारि कोदंडु कठोरा। राज समाज आजु जोई तोरा ॥
त्रिभुवन जय समेत बैदेही। बिनहिं बिचार बरइ हठि तेही ॥
सुनि पन सकल भूप अभिलाषे। भटमानी अतिसय मन माखे ॥
परिकर बाँधि उठे अकुलाई। चले इष्टदेवन्ह सिर नाई ॥
तमकि ताकि तकि सिवधनु धरहीं। उठइ न कोटि भाँति बलु करहीं ॥
जिन्ह के कछु बिचारु मन माहीं। चाप समीप महीप न जाहीं ॥

तमकि धरहिं धनु मूढ़ नृप उठइ न चलहिं लजाइ।
मनहुँ पाई भट बाहुबलु अधिकु अधिकु गरुआई ॥

भूप सहस दस एकहि बारा। लगे उठावन टरइ न टारा ॥
डगइ न संभु सरासन कैसें। कामी बचन सती मनु जैसें ॥
सब नृप भए जोगु उपहासी। जैसें बिनु बिराग संन्यासी ॥
कीरति बिजय बीरता भारी। चले चाप कर बरबस हारी ॥
श्रीहत भए हारि हियँ राजा। बैठे निज निज जाइ समाजा ॥
नृपन्ह बिलोकि जनकु अकुलाने। बोले बचन रोष जनु साने ॥

दीप दीप के भूपति नाना । आए सुनि हम जो पनु ठाना ।।
देव दनुज धरि मनुज सरीरा । बिपुल बीर आए रनधीरा ।।

कुअँरि मनोहर बिजय बड़ि कीरति अति कमनीय ।
पावनिहार बिरंचि जनु रचेउ न धनु दमनीय ।।

कहहु काहि यहु लाभु न भावा । काहुँ न संकर चाप चढ़ावा ।।
रहउ चढाउब तोरब भाई । तिलु भरि भूमि न सके छड़ाई ।।
अब जनि कोउ माखै भट मानी । बीर बिहीन मही मैं जानी ।।
तजहु आस निज निज गृह जाहू । लिखा न बिधि बैदेहि बिबाहू ।।
सुकृतु जाइ जौं पन परिहरऊँ । कुअँरि कुआरि रहउ का करऊँ ।।
जौं जनतेउँ बिनु भट भुबि भाई । तौ पनु करि होतेउँ न हँसाई ।।
जनक बचन सुनि सब नर नारी । देखि जानकिहि भए दुखारी ।।
माखे लखनु कुटिल भइँ भौंहें । रदपट फरकत नयन रिसौंहें ।।

कहि न सकत रघुबीर डर लगे बचन जनु बान ।
नाइ राम पद कमल सिरु बोले गिरा प्रमान ।।

रघुबंसिन्ह महुँ जहँ कोउ होई । तेहिं समाज अस कहइ न कोई ।।
कही जनक जसि अनुचित बानी । बिद्यमान रघुकुल मनि जानी ।।
सुनहु भानुकुल पंकज भानू । कहउँ सुभाउ न कछु अभिमानू ।।
जौं तुम्हारी अनुसासन पावौं । कंदुक इव ब्रह्मांड उठावौं ।।
काचे घट जिमि डारौं फोरी । सकउँ मेरु मूलक जिमी तोरी ।।
तव प्रताप महिमा भगवाना । को बापुरो पिनाक पुराना ।।
नाथ जानि अस आयसु होऊ । कौतुक करौं बिलोकअ सोऊ ।।
कमल नाल जिमि चाप चढ़ावौं । जोजन सत प्रमान लै धावौं ।।

तोरौं छत्रक दंड जिमि तव प्रताप बल नाथ।
जौं न करौं प्रभु पद सपथ कर न धरौं धनु भाथ।।

लखन सकोप बचन जे बोले। डगमगानि महि दिग्गज डोले।।
सकल लोग सब भूप डेराने। सिय हियँ हरषु जनकु सकुचाने।।
गुर रघुपति सब मुनि मन माहीं। मुदित भए पुनि पुनि पुलकाहीं।।
सयनहिं रघुपति लखनु नेवारे। प्रेम समेत निकट बैठारे।।
बिस्वामित्र समय सुभ जानी। बोले अति सनेहमय बानी।।
उठहु राम भंजहु भव चापा। मेटहु तात जनक परितापा।।
सुनि गुरु बचन चरन सिरु नावा। हरषु विषादु न कछु उर आवा।।
ठाढ़े भए उठि सहज सुभाएँ। ठवनि जुवा मृगराजु लजाएँ।।

उदित उदयगिरि मंच पर रघुबर बालपतंग।
विकसे संत सरोज सब हरषे लोचन भृंग।।

नृपन्ह केरि आसा निसि नासी। बचन नखत अवली न प्रकासी।।
मानी महिप कुमुद सकुचाने। कपटी भूप उलूक लुकाने।।
भए बिसोक कोक मुनि देवा। बरिसहिं सुमन जनावहिं सेवा।।
गुर पद बंदि सहित अनुरागा। राम मुनिन्ह सन आयसु मागा।।
सहजहिं चले सकल जग स्वामी। मत्त मंजु बर कुंजर गामी।।
चलत राम सब पुर नर नारी। पुलक पूरि तन भए सुखारी।।
बंदि पितर सुर सुकृत संभारे। जौं कछु पुन्य प्रभाउ हमारे।।
तौ सिवधनु मृनाल की नाईं। तोरहुँ रामु गनेस गोसाईं।।

रामहि प्रेम समेत लखि सखिन्ह समीप बोलाइ।
सीता मातु सनेह बस बचन कहइ बिलखाइ।।

सखि सब कौतुक देख निहारे। जेउ कहावत हितू हमारे ॥
कोउ न बुझाइ कहइ गुर पाहीं। ए बालक असि हठ भलि नाहीं ॥
रावन बान छुआ नहिं चापा। हारे सकल भूप करि दापा ॥
सो धनु राजकुअँर कर देहीं। बाल मराल कि मंदर लेहीं ॥
भूप सयानप सकल सिरानी। सखि बिधि गति कछु जाति न जानी॥
बोली चतुर सखी मृदु बानी। तेजवंत लघु गनिअ न रानी ॥
कहँ कुंभज कहँ सिंधु अपारा। सोषेउ सुजसु सकल संसारा ॥
रबि मंडल देखत लघु लागा। उदयँ तासु तिभुवन तम भागा ॥

मंत्र परम लघ जासु बस बिधि हरि हर सुर सर्ब।
महामत्त गजराज कहुँ बस कर अंकुस खर्ब ॥

काम कुसुम धनु सायक लीन्हे। सकल भुवन अपनें बस कीन्हे ॥
देबि तजिअ संसउ अस जानी। भंजब धनुषु राम सुनु रानी ॥
सखी बचन सुनि भै परतीती। मिटा बिषादु बढ़ी अति प्रीती ॥
तब रामहि बिलोकि बैदेही। सभय हृदयँ विनवति जेहि तेही ॥
मनहीं मन मनाव अकुलानी। होहु प्रसन्न महेस भवानी ॥
करहु सफल आपनि सेवकाई। करि हितु हरहु चाप गरुआई ॥
गननायक बरदायक देवा। आजु लगें कीन्हिउँ तुअ सेवा ॥
बार बार बिनती सुनि मोरी। करहु चाप गुरुता अति थोरी ॥

देखि देखि रघुबीर तन सुर मनाव धरि धीर।
भरे बिलोचन प्रेम जल पुलकावली सरीर ॥

नीकें निरखि नयन भरि सोभा। पितु पनु सुमिरि बहुरि मन छोभा ॥
अहह तात दारुनि हठ ठानी। समुझत नहिं कछु लाभु न हानी ॥

सचिव सभय सिख देइ न कोई। बुध समाज बड़ अनुचित होई ।।
कहँ धनु कुलिसहु चाहि कठोरा। कहँ स्यामल मृदुगात किसोरा ।।
विधि केहि भाँति धरौं उर धीरा। सिरस सुमन कन बेधिअ हीरा ।।
सकल सभा कै मति भै भारी। अब मोहि संभुचाप गति तोरी ।।
निज जडता लोगन्ह पर डारी। होहि हरुअ रघुपतिहि निहारी ।।
अति परिताप सीय मन माहीं। लव निमेष जुग सय सम जाहीं ।।

प्रभुहि चितइ पुनि चितव महि राजत लोचन लोल।
खेलत मनसिज मीन जुग जनु बिधु मंडल डोल ।।

गिरा अलिनि मुख पंकज रोकी। प्रकट न लाज निसा अबलोकी ।।
लोचन जलु रह लोचन कोना। जैसें परम कृपन कर सोना ।।
सकुची व्याकुलता बड़ि जानी। धरि धीरजु प्रतीति उर आनी ।।
तन मन वचन मोर पनु साचा। रघुपति पद सरोज चितु राचा ।।
तौ भगवानु सकल उर बासी। करिहि मोहि रघुबर कै दासी ।।
जेहि कें जेहि पर सत्य सनेहू। सो तिहि मिलइ न कछु संदेहू ।।
प्रभु तन चितइ प्रेम तन ठाना। कृपानिधान राम सबु जाना ।।
सियहि बिलोकि तकेउ धनु कैसें। चितव गरुरु लघु व्यालहि जैसें ।।

लखन लखेउ रघुबंसमनि ताकेउ हर कोदंडु।
पुलकि गात बोले बचन चरन चापि ब्रह्मांडु ।।

दिसिकुंजरहु कमठ अहि कोला। धरहु धरनि धरि धीर न डोला ।।
रामु चहहिं संकर धनु तोरा। होहु सजग सुनि आयसु मोरा ।।
चाप समीप रामु जब आए। नर नारिन्ह सुर सुकृत मनाए ।।
सब कर संसउ अरु अग्यानू। मंद महीपन्ह कर अभिमानू ।।

भृगुपति केरि गरब गरुआई । सुर मुनिबरन्ह केरि कदराई ।।
सिय कर सोचु जनक पछितावा । रानिन्ह कर दारुन दुख दावा ।।
सँभुचाप बड़ बोहितु पाई । चढ़े जाइ सब संगु बनाई ।।
राम बाहुबल सिंधु अपारू । चहत पारु नहिं कोउ कड़हारू ।।

राम बिलोके लोग सब चित्र लिखे से देखि ।
चितइ सीय कृपायतन जानी बिकल बिसेषी ।।

देखी बिपुल बिकल बैदेही । निमिष बिहात कलप सम तेही ।।
तृषित बारि बिनु जो तनु त्यागा । मुएँ करइ का सुधा तड़ागा ।।
का बरषा सब कृषी सुखानें । समय चुकें पुनि का पछितानें ।।
अस जिय जानि जानकी देखी । प्रभु पुलके लखि प्रीति बिसेषी ।।
गुरहि प्रनामु मनहिं मन कीन्हा । अति लाघवँ उठाई धनु लीन्हा ।।
दमकेउ दामिनि जिमि जब लयऊ । पुनि नभ धनु मंडल सम भयऊ ।।
लेत चढ़ावत खैंचत गाढ़ें । काहुँ न लखा देख सबु ठाढ़ें ।।
तेहि छन राम मध्य धनु तोरा । भरे भुवन धुनि घोर कठोरा ।।

भरे भुवन घोर कठोर रव रबि बाजि तजि मारगु चले ।
चिक्करहिं दिग्गज डोल महि अहि कोल कूरुम कलमले ।।
सुर असुर मुनि कर कान दीन्हें सकल बिकल बिचारहीं ।
कोदंड खंडेउ राम तुलसी जयति बचन उचारहीं ।।
संकर चापु जहाजु सागरु रघुबर बाहुबलु ।
बूड़ सो सकल समाजु चढ़ा जो प्रथमहिं मोह बस ।।

प्रभु दोउ चापखंड महि डारे । देखि लोग सब भए सुखारे ।।
कौसिकरूप पयोनिधि पावन । प्रेम बारि अवगाहु सुहावन ।।

रामरूप राकेसु निहारी । बढ़त बीचि पुलकावलि भारी ॥
बाजे नभ गहगहे निसाना । देवबधू नाचहिं करि गाना ॥
ब्रह्मादिक सुर सिद्ध मुनीसा । प्रभुहि प्रसंसहिं देहिं असीसा ॥
बरिसहिं सुमन रंग बहु माला । गावहिं किंनर गीत रसाला ॥
रही भुवन भरि जय जय बानी । धनुषभंग धुनि जात न जानी ॥
मुदित कहहिं जहँ तहँ नर नारी । भंजेउ राम संभु धनु भारी ॥

बंदी मागध सूतगन बिरुद बदहिं मतिधीर ।
करहिं निछावर लोग सब हय गय धन मनि चीर ॥

झाँझि मृदंग संख सहनाई । भेरि ढोल दुंदुभी सुहाई ॥
बाजहिं बहु बाजने सुहाए । जहँ तहँ जुबतिन्ह मंगल गाए ॥
सखिन्ह सहित हरषी अति रानी । सूखत धान परा जनु पानी ॥
जनक लहेउ सुखु सोचु बिहाई । पैरत थकें थाह जनु पाई ॥
श्रीहत भए भूप धनु टूटे । जैसें दिवस दीप छबि छूटे ॥
सीय सुखहि बरनिअ केहि भाँति । जनु चातकी पाई जलु स्वाती ॥
रामहि लखनु बिलोकत कैसें । ससिहि चकोर किसोरकु जैसें ॥
सतानंद तब आयसु दीन्हा । सीताँ गमनु राम पहिं कीन्हा ॥

संग सखीं सुंदर चतुर गावहिं मंगलचार ।
गवनी बाल मराल गति सुषमा अंग अपार ॥

सखिन्ह मध्य सिय सोहति कैसें । छबिगन मध्य महाछबि जैसें ॥
कर सरोज जयमाल सुहाई । बिस्व बिजय सोभा जेहिं छाई ॥
तन सकोचु मन परम उछाहू । गूढ़ प्रेमु लखि परइ न काहू ॥
जाइ समीप राम छबि देखी । रहि जनु कुअँरि चित्र अवरेखी ॥

चतुर सखीं लखि कहा बुझाई। पहिरावहु जयमाल सुहाई॥
सुनत जुगल कर माल उठाई। प्रेम बिबस पहिराइ न जाई॥
सोयत जनु जुग जलज सनाला। ससिहि सभीत देत जयमाला॥
गावहिं छबि अवलोकि सहेली। सियँ जयमाल राम उर मेली॥

रघुबर उर जयमाल देखि देव बरिसहिं सुमन।
सकुचे सकल भुआल जनु बिलोकि रबि कुमुदगन॥

पुर अरु ब्योम बाजने बाजे। खल भए मलिन साधु सब राजे॥
सुर किंनर नर नाग मुनीसा। जय जय जय कहि देहिं असीसा॥
नाचहिं गावहिं बिबुध बधूटीं। बार बार कुसुमांजलि छूटीं॥
जहँ तहँ बिप्र बेद धुनि करहीं। बंदी बिरिदावलि उच्चरहीं॥
महि पाताल नाक जसु ब्यापा। राम बरी सिय भंजेउ चापा॥
करहिं आरती पुर नर नारी। देहिं निछावरि बित्त बिसारी॥
सोहति सीय राम कै जोरी। छबि सिंगारु मनहुँ एक ठोरी॥
सखी कहहिं प्रभुपद गहु सीता। करति न चरन परस अति भीता॥

गौतम तिय गति सुरति करि नहिं परसति पग पानि।
मन बिहसे रघुबंसमनि प्रीति अलौकिक जानि॥

तब सिय देखि भूप अभिलाषे। कूर कपूत मूढ़ मन माखे॥
उठि उठि पहिरि सनाह अभागे। जहँ तहँ गाल बजावन लागे॥
लेहु छड़ाइ सीय कह कोऊ। धरि बाँधहु नृप बालक दोऊ॥
तोरें धनुषु चाड़ नहिं सरई। जीवत हमहि कुअँरि को बरई॥
जौं बिदेहु कछु करै सहाई। जीतहु समर सहित दोउ भाई॥
साधु भूप बोले सुनि बानी। राजसमाजहि लाज लजानी॥

बलु प्रतापु बीरता बड़ाई। नाक पिनाकहि संग सिधाई ॥
सोइ सूरता कि अब कहुँ पाई। असि बुधि तौ बिधि मुँह मसि लाई ॥

देखहु रामहि नयन भरि तजि इरिषा मदु कोहु।
लखन रोषु पावकु प्रबल जानि सलभ जनि होहु ॥

बैनतेय बलि जिमि चह कागू। जिमि ससु चहै नाग अरि भागू ॥
जिमि चह कुसल अकारन कोही। सब संपदा चहै सिवद्रोही ॥
लोभी लोलुप कल कीरति चहई। अकलंकता कि कामी लहई ॥
हरि पद विमुख परम गति चाहा। तस तुम्हार लालचु नरनाहा ॥
कोलाहल सुनि सीय सकानी। सखीं लवाइ गईं जहँ रानी ॥
रामु सुभायँ चले गुरु पाहीं। सिय सनेहु बरनत मन माहीं ॥
रानिन्ह सहित सोचबस सीया। अब धौं बिधिहि काह करनीया ॥
भूप बचन सुनि इत उत तकहीं। लखनु राम डर बोलि न सकहीं ॥

अरुन नयन भृकुटी कुटिल चितवत नृपन्ह सकोप।
मनहुँ मत्त गजगन निरखि सिंघ किसोरहि चोप ॥

खरभरु देखि विकल पुर नारीं। सब मिलि देहिं महीपन्ह गारीं ॥
तेहि अवसर सुनि सिवधनु भंगा। आयउ भृगुकुल कमल पतंगा ॥
देखि महीप सकल सकुचाने। बाज झपट जनु लवा लुकाने ॥
गौरि सरीर भूति भल भ्राजा। भाल बिसाल त्रिपुंड विराजा ॥
सीस जटा ससिबदनु सुहावा। रिस बस कछुक अरुन होइ आवा ॥
भृकुटी कुटिल नयन रिस राते। सहजहुं चितवत मनहुं रिसाते ॥
वृषभ कंध उर बाहु बिसाला। चारु जनेउ माल मृगछाला ॥
कटि मुनिबसन तून दुइ बाँधें। धनु सर कर कुठारु कल काँधें ॥

सांत बेषु करनी कठिन बरनि न जाइ सरूप।
धरि मुनितनु जनु बीर रसु आयउ जहँ सब भूप॥

देखत भृगुपति बेषु कराला। उठे सकल भय बिकल भुआला॥
पितु समेत कहि कहि निज नामा। लगे करन सब दंड प्रनामा॥
जेहि सुभायँ चितवहिं हितु जानी। सो जानइ जनु आइ खुटानी॥
जनक बहोरि आइ सिरु नावा। सीय बोलाइ प्रनामु करावा॥
आसिष दीन्हि सखीं हरषानीं। निज समाज लै गईं सयानीं॥
बिस्वामित्रु मिले पुनि आई। पद सरोज मेले दोउ भाई॥
रामु लखनु दसरथ के ढोटा। दीन्हि असीस देखि भल जोटा॥
रामहि चितइ रहे थकि लोचन। रूप अपार मार मद मोचन॥

बहुरि बिलोकि बिदेह सन कहहु काह अति भीर।
पूँछत जानि अजान जिमि ब्यापेउ कोपु सरीर॥

समाचार कहि जनक सुनाए। जेहि कारन महीप सब आए॥
सुनत बचन फिरि अनत निहारे। देखे चापखंड महि डारे॥
अति रिस बोले बचन कठोरा। कहु जड़ जनक धनुष कै तोरा॥
बेगि देखाउ मूढ़ न त आजू। उलटउँ महि जहँ लहि तव राजू॥
अति डरु उतरु देत नृप नाहीं। कुटिल भूप हरषे मन माहीं॥
सुर मुनि नाग नगर नर नारी। सोचहिं सकल त्रास उर भारी॥
मन पछिताति सीय महतारी। बिधि अब सँवरी बात बिगारी॥
भृगुपति कर सुभाउ सुनि सीता। अरध निमेष कलप सम बीता॥

सभय बिलोके लोग सब जानि जानकी भीरु।
हृदयँ न हरषु बिषादु कछु बोले श्रीरघुबीरु॥

नाथ संभुधनु भंजनिहारा । होइहि कोउ एक दास तुम्हारा ।।
आयसु काह कहिअ किन मोही । सुनि रिसाइ बोले मुनि कोही ।।
सेवकु सो जो करै सेवकाई । अरि करनी करि करिअ लराई ।।
सुनहु राम जेहिं सिवधनु तोरा । सहसबाहु सम सो रिपु मोरा ।।
सो बिलगाउ बिहाइ समाजा । न त मारे जैहहिं सब राजा ।।
सुनि मुनि बचन लखन मुसकाने । बोले परसु धरहि अपमाने ।।
बहु धनुहीं तोरीं लरिकाईं । कबहुँ न असि रिस कीन्हि गोसाईं ।।
एहि धनु पर ममता केहि हेतू । सुनि रिसाइ कह भृगुकुलकेतू ।।

रे नृपबालक काल बस बोलत तोहि न सँभार ।
धनुही सम तिपुरारि धनु बिदित सकल संसार ।।

लखन कहा हँसि हमरें जाना । सुनहु देव सब धनुष समाना ।।
का छति लाभु जून धनु तोरें । देखा राम नयन के भोरें ।।
छुअत टूट रघुपतिहु न दोसू । मुनि विनु काज करिअ कत रोसू ।।
बोले चितइ परसु की ओरा । रे सठ सुनेहि सुभाउ न मोरा ।।
बालक बोलि बधउँ नहिं तोही । केवल मुनि जड़ जानहि मोही ।।
बाल ब्रह्मचारी अति कोही । बिस्व बिदित छत्रियकुल द्रोही ।।
भुजबल भूमि भूप विनु कीन्ही । बिपुल बार महिदेवन्ह दीन्ही ।।
सहसबाहु भुज छेदनिहारा । परसु बिलोकु महीपकुमारा ।।

मातु पितहि जनि सोचबस करसि महीसकिसोर ।
गर्भन्ह के अभर्क दलन परसु मोर अति घोर ।।

बिहसि लखन बोले मृदु बानी । अहो मुनीस महा भटमानी ।।
पुनि पुनि मोहि देखाव कुठारू । चहत उड़ावन फूँकि पहारू ।।

इहाँ कुम्हड़बतिया कोउ नाहीं। जे तरजनी देखि मरि जाहीं॥
देखि कुठारु सरासन बाना। मैं कछु कहा सहित अभिमाना॥
भृगुसुत समुझि जनेउ बिलोकी। जो कछु कहहु सहउँ रिस रोकी॥
सुर महिसुर हरिजन अरु गाई। हमरें कुल इन्ह पर न सुराई॥
बधें पापु अपकीरति हारें। मारत हूँ पा परिअ तुम्हारें॥
कोटि कुलिस सम बचनु तुम्हारा। ब्यर्थ धरहु धनु बान कुठारा॥

जो बिलोकि अनुचित कहेउँ छमहु महामुनि धीर।
सुनि सरोष भृगुबंसमनि बोले गिरा गभीर॥

कौसिक सुनहु मंद यहु बालकु। कुटिल कालबस निजकुल घालकु॥
भानु बंस राकेस कलंकू। निपट निरंकुस अबुध असंकू॥
काल कवलु होइहि छन माहीं। कहउँ पुकारि खोरि मोहि नाहीं॥
तुम्ह हटकहु जौं चहहु उबारा। कहि प्रतापु बलु रोषु हमारा॥
लखन कहेउ मुनि सुजस तुम्हारा। तुम्हहि अछत को बरनै पारा॥
अपने मुँह तुम्ह आपनि करनी। बार अनेक भाँति बहु बरनी॥
नहिं संतोषु त पुनि कछु कहहू। जनि रिस रोकि दुसह दुख सहहू॥
बीरब्रती तुम्ह धीर अछोभा। गारी देत न पावहु सोभा॥

सूर समर करनी करहिं कहि न जनावहिं आपु।
बिद्यमान रन पाइ रिपु कायर कथहिं प्रतापु॥

तुम्ह तौ कालु हाँक जनु लावा। बार बार मोहि लागि बोलावा॥
सुनत लखन के बचन कठोरा। परसु सुधारि धरेउ कर घोरा॥
अब जनि देइ दोसु मोहि लोगू। कटुबादी बालकु बधजोगू॥
बाल बिलोकि बहुत मैं बाँचा। अब यहु मरनिहार भा साँचा॥

कौसिक कहा छमिअ अपराधू । बाल दोष गुन गनहिं न साधू ॥
खर कुठार मैं अकरुन कोही । आगें अपराधी गुरुद्रोही ॥
उतर देत छोड़उँ बिनु मारें । केवल कौसिक सील तुम्हारें ॥
न त एहि काटि कुठार कठोरें । गुरहि उरिन होतेउँ श्रम थोरें ॥

गाधिसूनु कह हृदयँ हँसि मुनिहि हरिअरइ सूझ ।
अयमय खाँड़ न ऊखमय अजहुं न बूझ अबूझ ॥

कहेउ लखन मुनि सीलु तुम्हारा । को नहिं जान बिदित संसारा ॥
माता पितहि उरिन भए नीकें । गुरु रिनु रहा सोचु बड़ जीकें ॥
सो जनु हमरेहि माथे काढ़ा । दिन चलि गए ब्याज बड़ बाढ़ा ॥
अब आनिअ व्यवहरिआ बोली । तुरत देउँ मैं थैली खोली ॥
सुनि कटु बचन कुठार सुधारा । हाय हाय सब सभा पुकारा ॥
भृगुबर परसु देखावहु मोही । बिप्र बिचारि बचउँ नृपद्रोही ॥
मिले न कबहुं सुभट रन गाढ़े । द्विज देवता घरहि के बाढ़े ॥
अनुचित कहि सब लोग पुकारे । रघुपति सयनहिं लखनु नेवारे ॥

लखन उतर आहुति सरिस भृगुबर कोपु कृसानु ।
बढ़त देखि जल सम बचन बोले रघुकुलभानु ॥

नाथ करहु बालक पर छोहू । सूध दूधमुख करिअ न कोहू ॥
जौं पै प्रभु प्रभाउ कछु जाना । तौ कि बराबरि करत अयाना ॥
जौं लरिका कछु अचगरि करहीं । गुरु पितु मातु मोद मन भरहीं ॥
करिअ कृपा सिसु सेवक जानी । तुम्ह सम सील धीर मुनि ग्यानी ॥
राम बचन सुनि कछुक जुड़ाने । कहि कछु लखनु बहुरि मुसुकाने ॥
हँसत देखि नख सिख सिख ब्यापी । राम तोर भ्राता बड़ पापी ॥

गौर सरीर स्याम मन माहीं। कालकूटमुख पयमुख नाहीं॥
सहज टेढ़ अनुहरइ न तोही। नीचु मीचु सम देख न मोही॥

लखन कहेउ हँसि सुनहु मुनि क्रोधु पाप कर मूल।
जेहि बस जन अनुचित करहिं चरहिं बिस्व प्रतिकूल॥

मैं तुम्हार न अनुचर मुनिराया। परिहरि कोपु करिअ अब दाया॥
टूट चाप नहिं जुरिहि रिसाने। बैठिअ होइहिं पाय पिराने॥
जौं अति प्रिय तौ करिअ उपाई। जोरिअ कोउ बड़ गुनी बोलाई॥
बोलत लखनहिं जनकु डेराहीं। मष्ट करहु अनुचित भल नाहीं॥
थर थर काँपहिं पुर नर नारी। छोट कुमार खोट बड़ भारी॥
भृगुपति सुनि सुनि निरभय बानी। रिस तन जरइ होइ बल हानी॥
बोले रामहि देइ निहोरा। बचउँ बिचारि बंधु लघु तोरा॥
मनु मलीन तनु सुंदर कैसें। बिष रस भरा कनक घटु जैसें॥

सुनि लछिमन बिहसे बहुरि नयन तरेरे राम।
गुर समीप गवने सकुचि परिहरि बानी बाम॥

अति बिनीत मृदु सीतल बानी। बोले रामु जोरि जुग पानी॥
सुनहु नाथ तुम्ह सहज सुजाना। बालक बचनु करिअ नहिं काना॥
बररै बालक एकु सुभाऊ। इन्हहि न संत बिदूषहिं काऊ॥
तेहिं नाहीं कछु काज बिगारा। अपराधी मैं नाथ तुम्हारा॥
कृपा कोपु बधु बँधब गोसाईं। मो पर करिअ दास की नाईं॥
कहिअ बेगि जेहि बिधि रिस जाई। मुनिनायक सोइ करौं उपाई॥
कह मुनि राम जाइ रिस कैसें। अजहुं अनुज तव चितव अनैसें॥
एहि कें कंठ कुठारु न दीन्हा॥ तौ मैं काह कोपु करि कीन्हा॥

गर्भ स्त्रवहिं अवनिप रवनि सुनि कुठार गति घोर ।
परसु अछत देखउँ जिअत बैरी भूपकिसोर ।।

बहइ न हाथु दहइ रिस छाती । भा कुठारु कुंठित नृपघाती ।।
भयउ बाम बिधि फिरेउ सुभाऊ । मोरे हृदयँ कृपा कसि काऊ ।।
आजु दया दुखु दुसह सहावा । सुनि सौमित्रि बिहसि सिरु नावा ।।
बाउ कृपा मूरति अनुकूला । बोलत बचन झरत जनु फूला ।।
जौं पै कृपाँ जरिहिं मुनि गाता । क्रोध भएँ तनु राख बिधाता ।।
देखु जनक हठि बालकु एहू । कीन्ह चहत जड़ जमपुर गेहू ।।
बेगि करहु किन आँखिन्ह ओटा । देखत छोट खोट नृप ढोटा ।।
बिहसे लखनु कहा मन माहीं । मूदें आँखि कतहुं कोउ नाहीं ।।

परसुराम तब राम प्रति बोले उर अति क्रोधु ।
संभु सरासन तोरि सठ करसि हमार प्रबोधु ।।

बंधु कहइ कटु संमत तोरें । तू छल बिनय करसि कर जोरें ।।
करु परितोषु मोर संग्रामा । नाहिं त छाड़ कहाउब रामा ।।
छलु तजि करहि समरु सिवद्रोही । बंधु सहित न त मारउँ तोही ।।
भृगुपति बकहिं कुठार उठाएँ । मन मुसुकाहिं रामु सिर नाएँ ।।
गुनह लखन कर हम पर रोषू । कतहुं सुधाइहु ते बड़ दोषू ।।
टेढ़ जानि सब बंदइ काहू । बक्र चंद्रमहि ग्रसइ न राहू ।।
राम कहेउ रिस तजिअ मुनीसा । कर कुठारु आगें यह सीसा ।।
जेहिं रिस जाइ करिअ सोइ स्वामी । मोहि जानिअ आपन अनुगामी ।।

प्रभुहि सेवकहि समरु कस तजहु बिप्रबर रोसु ।
बेषु बिलोकें कहेसि कछु बालकहू नहिं दोसु ।।

देखि कुठार बान धनु धारी। भै लरिकहि रिस बीरु बिचारी ॥
नामु जान पै तुम्हहि न चीन्हा। बंस सुभायं उतरु तेहिं दीन्हा ॥
जौं तुम्ह औतेहु मुनि की नाईं। पद रज सिर सिसु धरत गोसाईं ॥
छमहु चूक अनजानत केरी। चहिअ बिप्र उर कृपा घनेरी ॥
हमहि तुम्हहि सरिबरि कसि नाथा। कहहु न कहाँ चरन कहँ माथा ॥
राम मात्र लघु नाम हमारा। परसु सहित बड़ नाम तोहारा ॥
देव एकु गुनु धनुष हमारें। नव गुन परम पुनीत तुम्हारें ॥
सब प्रकार हम तुम्ह सन हारे। छमहु बिप्र अपराध हमारे ॥

बार बार मुनि बिप्रबर कहा राम सन राम।
बोले भृगुपति सरुष हसि तहूँ बंधु सम बाम ॥

निपटहिं द्विज करि जानहि मोही। मैं जस बिप्र सुनावउँ तोही ॥
चाप स्रुवा सर आहुति जानू। कोपु मोर अति घोर कृसानू ॥
समिधि सेन चतुरंग सुहाई। महा महीप भए पसु आई ॥
मैं एहिं परसु काटि बलि दीन्हे। समर जग्य जप कोटिन्ह कीन्हे ॥
मोर प्रभाउ बिदित नहिं तोरें। बोलसि निदरि बिप्र के भोरें ॥
भंजेउ चापु दापु बड़ बाढ़ा। अहमिति मनहुं जीति जगु ठाढ़ा ॥
राम कहा मुनि कहहु बिचारी। रिस अति बड़ि लघु चूक हमारी ॥
छुअतहिं टूट पिनाक पुराना। मैं केहि हेतु करौं अभिमाना ॥

जौं हम निदरहिं बिप्र बदि सत्य सुनहु भृगुनाथ।
तौ अस को जग सुभटु जेहि भय बस नावहिं माथ ॥

देव दनुज भूपति भट नाना। समबल अधिक होउ बलवाना ॥
जौं रन हमहि पचारै कोऊ। लरहिं सुखेन कालु किन होऊ ॥

छत्रिय तनु धरि समर सकाना । कुल कलंकु तेहिं पावँर आना ॥
कहउँ सुभाउ न कुलहि प्रसंसी । कालहु डरहिं न रन रघुबंसी ॥
बिप्रबंस कै असि प्रभुताई । अभय होइ जो तुम्हहि डेराई ॥
सुनि मृदु गूढ़ बचन रघुपति के । उघरे पटल परसुधर मति के ॥
राम रमापति कर धनु लेहू । खैंचहु मिटै भोर संदेहू ॥
देत चापु आपुहिं चलि गयऊ । परसुराम मन बिसमय भयऊ ॥

जाना राम प्रभाउ तब पुलक प्रफुल्लित गात ।
जोरि पानि बोले बचन हृदयँ न प्रेमु अमात ॥

जय रघुबंस बनज बन भानू । गहन दनुज कुल दहन कृसानू ॥
जय सुर बिप्र धेनु हितकारी । जय मद मोह कोह भ्रम हारी ॥
बिनय सील करुना गुन सागर । जयति बचन रचना अति नागर॥
सेवक सुखद सुभग सब अंगा । जय सरीर छबि कोटि अनंगा ॥
करौं काह मुख एक प्रसंसा । जय महेस मन मानस हंसा ॥
अनुचित बहुत कहेउँ अग्याता । छमहु छमामंदिर दोउ भ्राता ॥
कहि जय जय जय रघुकुलकेतू । भृगुपति गए बनहि तप हेतू ॥
अपभयँ कुटिल महीप डेराने । जहँ तहँ कायर गवँहि पराने ॥

देवन्ह दीन्हीं दुंदुभीं प्रभु पर बरषहिं फूल ।
हरषे पुर नारि सब मिटी मोहमय सूल ॥

[बालकाण्ड, रामचरितमानस]

वन-गमन

राम लखन सिय जान चढ़ि संभु चरन सिरु नाइ।
सचिवँ चलायउ तुरत रथु इत उत खोज दुराइ ॥

जागे सकल लोग भएँ भोरू। गे रघुनाथ भयउ अति सोरू ॥
रथ कर खोज कतहुँ नहिं पावहिं। राम राम कहि चहुँ दिसि धावहिं ॥
मनहुँ बारिनिधि बूड़ जहाजू। भयउ बिकल बड़ बनिक समाजू ॥
एकहि एक देहिं उपदेसू। तजे राम हम जानि कलेसू ॥
निंदहिं आपु सराहहिं मीना। धिग जीवनु रघुबीर बिहीना ॥
जौं पै प्रिय बियोगु बिधि कीन्हा। तौ कस मरनु न मागें दीन्हा ॥
एहि बिधि करत प्रलाप कलापा। आए अवध भरे परितापा ॥
बिषम बियोगु न जाइ बखाना। अवधि आस सब राखहिं प्राना ॥

राम दरस हित नेम ब्रत लगे करन नर नारि।
मनहुँ कोक कोकी कमल दीन बिहीन तमारि ॥

सीता सचिव सहित दोउ भाई। सृंगबेरपुर पहुँचे जाई ॥
उतरे राम देवसरि देखी। कीन्ह दंडवत हरषु बिसेषी ॥
लखन सचिवँ सियँ किए प्रनामा। सबहि सहित सुखु पायउ रामा ॥
गंग सकल मुद मंगल मूला। सब सुख करनि हरनि सब सूला ॥
कहि कहि कोटिक कथा प्रसंगा। रामु बिलोकहिं गंग तरंगा ॥
सचिवहि अनुजहि प्रियहि सुनाई। बिबुध नदी महिमा अधिकाई ॥

मज्जनु कीन्ह पंथ श्रम गयऊ। सुचि जलु पिअत मुदित मन भयऊ।।
सुमिरत जाहि मिटइ श्रम भारू। तेहि श्रम यह लौकिक ब्यवहारू ।।

सुद्ध सच्चिदानंदमय कंद भानुकुल केतु ।।
चरित करत नर अनुहरत संसृति सागर सेतु ।।

यह सुधि गुहँ निषाद जब पाई। मुदित लिए प्रिय बंधु बोलाई ।।
लिए फल मूल भेंट भरि भारा। मिलन चलेउ हियँ हरषु अपारा ।।
करि दंडवत भेंट धरि आगें। प्रभुहि बिलोकत अति अनुरागें ।।
सहज सनेह बिबस रघुराई। पूँछी कुसल निकट बैठाई ।।
नाथ कुसल पद पंकज देखें। भयउँ भागभाजन जन लेखें ।।
देव धरनि धनु धामु तुम्हारा। मैं जनु नीचु सहित परिवारा ।।
कृपा करिअ पुर धारिअ पाऊ। थापिअ जनु सबु लोगु सिहाऊ ।।
कहेहु सत्य सबु सखा सुजाना। मोहि दीन्ह पितु तायसु आना ।।

बरष चारिदस बासु बन मुनि ब्रत बेषु अहारु।
ग्राम बासु नहिं उचित सुनि गुहहि भयउ दुखु भारु ।।

राम लखन सिय रूप निहारी। कहहिं सप्रेम ग्राम नर नारी ।।
ते पितु मातु कहहु सखि कैसे। जिन्ह पठए बन बालक ऐसे ।।
एक कहहिं भल भूपति कीन्हा। लोयन लाहु हमहि बिधि दीन्हा ।।
तब निषादपति उर अनुमाना। तरु सिंसुपा मनोहर जाना ।।
लै रघुनाथहि ठाउँ देखावा। कहेउ राम सब भाँति सुहावा ।।
पुरजन करि जोहारु घर आए। रघुबर संध्या करन सिधाए ।।
गुहँ सँवारि साँथरि डसाई। कुस किसलयमय मृदुल सुहाई ।।
सुचि फल मूल मधुर मृदु जानी। दोना भरि भरि राखेसि पानी ।।

सिय सुमंत्र भ्राता सहित कंद मूल फल खाइ ।
सयन कीन्ह रघुबंसमनि पाय पलोटत भाइ ॥

उठे लखनु प्रभु सोवत जानी । कहि सचिवहि सोवन मृदु बानी ॥
कछुक दूरि सजि बान सरासन । जागन लगे बैठि बीरासन ॥
गुहँ बोलाइ पाहरू प्रतीती । ठावँ ठावँ राखे अति प्रीती ॥
आपु लखन पहिं बैठेउ जाई । कटि भाथी सर चाप चढ़ाई ॥
सोवत प्रभुहि निहारि निषादू । भयउ प्रेम बस हृदयँ बिषादू ॥
तनु पुलकित जलु लोचन बहई । बचन सप्रेम लखन सन कहई ॥
भूपति भवन सुभायँ सुहावा । सुरपति सदनु न पटतर पावा ॥
मनिमय रचित चारु चौबारे । जनु रतिपति निज हाथ सँवारे ॥

सुचि सुबिचित्र सुभोगमय सुमन सुगंध सुबास ।
पलँग मंजु मनि दीप जहँ सब बिधि सकल सुपास ॥

बिबिध बसन उपधान तुराई । छीर फेन मृदु बिसद सुहाई ॥
तहँ सिय रामु सयन निसि करहीं । निज छबि रति मनोज मदु हरहीं ॥
ते सिय रामु साथरीं सोए । श्रमित बसन बिनु जाहिं न जोए ॥
मातु पिता परिजन पुरबासी । सखा सुसील दास अरु दासी ॥
जोगवहिं जिन्हहि प्रान की नाई । महि सोवत तेइ राम गोसाई ॥
पिता जनक जग बिदित प्रभाऊ । ससुर सुरेस सखा रघुराऊ ॥
रामचंदु पति सो बैदेही । सोवत महि बिधि बाम न केही ॥
सिय रघुबीर कि कानन जोगू । करम प्रधान सत्य कह लोगू ॥

कैकयनंदिनि मंदमति कठिन कुटिलपनु कीन्ह ।
जेहिं रघुनंदन जानकिहि सुख अवसर दुखु दीन्ह ॥

भइ दिनकर कुल बिटप कुठारी। कुमति कीन्ह सब बिस्व दुखारी॥
भयउ बिषादु निषादहि भारी। राम सीय महि सयन निहारी॥
बोले लखन मधुर मृदु बानी। ग्यान बिराग भगति रस सानी॥
काहु न कोउ सुख दुख कर दाता। निज कृत करम भोग सबु भ्राता॥
जोग बियोग भोग भल मंदा। हित अनहित मध्यम भ्रम फंदा॥
जनमु मरनु जहँ लगि जग जालू। संपति बिपति करमु अरु कालू॥
धरनि धामु धनु पुर परिवारू। सरगु नरकु जहँ लगि ब्यवहारू॥
देखिअ सुनिअ गुनिअ मन माहीं। मोह मूल परमारथु नाहीं॥

सपनें होइ भिखारि नृपु रंकु नाकपति होइ।
जागें लाभु न हानि कछु तिमि प्रपंच जियँ जोइ॥

अस बिचारि नहिं कीजिअ रोसू। काहुहि बादि न देइअ दोसू॥
मोह निसाँ सबु सोवनिहारा। देखिअ सपन अनेक प्रकारा॥
एहिं जग जामिनि जागहिं जोगी। परमारथी प्रपंच बियोगी॥
जानिअ तबहिं जीव जग जागा। जब सब बिषय बिलास बिरागा॥
होइ बिबेकु मोह भ्रम भागा। तब रघुनाथ चरन अनुरागा॥
सखा परम परमारथु एहू। मन क्रम बचन राम पद नेहू॥
राम ब्रह्म परमारथ रूपा। अबिगत अलख अनादि अनूपा॥
सकल बिकार रहित गतभेदा। कहि नित नेति निरूपहिं बेदा॥

भगत भूमि भूसुर सुरभि सुर हित लागि कृपाल।
करत चरित धरि मनुज तनु सुनत मिटहिं जग जाल॥

सखा समुझि अस परिहरि मोहू। सिय रघुबीर चरन रत होहू॥
कहत राम गुन भा भिनुसारा। जागे जग मंगल सुखदारा॥

सकल सौच करि राम नहावा। सुचि सुजान बट छीर मगावा ॥
अनुज सहित सिर जटा बनाए। देखि सुमंत्र नयन जल छाए ॥
हृदयँ दाहु अति बदन मलीना। कह कर जोरि बचन अति दीना ॥
नाथ कहेउ अस कोसलनाथा। लै रथु जाहु राम कें साथा ॥
बनु देखाइ सुरसरि अन्हवाई। आनेहु फेरि बेगि दोउ भाई ॥
लखनु रामु सिय आनेहु फेरी। संसय सकल सँकोच निबेरी ॥

नृप अस कहेउ गोसाइँ जस कहइ करौं बलि सोइ।
करि बिनती पायन्ह परेउ दीन्ह बाल जिमि रोइ ॥

तात कृपा करि कीजिअ सोई। जातें अवध अनाथ न होई ॥
मंत्रिहि राम उठाइ प्रबोधा। तात धरम मतु तुम्ह सबु सोधा ॥
सिबि दधीच हरिचंद नरेसा। सहे धरम हित कोटि कलेसा ॥
रंतिदेव बलि भूप सुजाना। धरमु धरेउ सहि संकट नाना ॥
धरमु न दूसर सत्य समाना। आगम निगम पुराना बखाना ॥
मैं सोइ धरमु सुलभ करि पावा। तजें तिहूँ पुर अपजसु छावा ॥
संभावित कहुँ अपजस लाहू। मरन कोटि सम दारुन दाहू ॥
तुम्ह सन तात बहुत का कहऊँ। दिएँ उतरु फिरि पातकु लहऊँ ॥

पितु पद गहि कहि कोटि नति बिनय करब कर जोरि।
चिंता कवनिहु बात कै तात करिअ जनि मोरि ॥

तुम्ह पुनि पितु सम अति हित मोरें। बिनती करउँ तात कर जोरें ॥
सब बिधि सोइ करतब्य तुम्हारें। दुख न पाव पितु सोच हमारें ॥
सुनि रघुनाथ सचिव संबादू। भयउ सपरिजन बिकल निषादू ॥
पुनि कछु लखन कही कटु बानी। प्रभु बरजे बड़ अनुचित जानी ॥

सकुचि राम निज सपथ देवाई। लखन सँदेसु कहिअ जनि जाई ॥
कह सुमंत्रु पुनि भूप सँदेसू। सहि न सकिहि सिय बिपिन कलेसू ॥
जेहि बिधि अवध आव फिरि सीया। सोइ रघुबरहि तुम्हहि करनीया ॥
नतरु निपट अवलंब बिहीना। मैं न जिअब जिमि जल बिनु मीना ॥

मइकें ससुरें सकल सुख जबहिं जहाँ मनु मान।
तहँ तब रहिहि सुखेन सिय जब लगि बिपति बिहान ॥

बिनती भूप कीन्ह जेहि भाँती। आरति प्रीति न सो कहि जाती ॥
पितु सँदेसु सुनि कृपानिधाना। सियहि दीन्ह सिख कोटि विधाना ॥
सासु ससुर गुर प्रिय परिवारू। फिरहु त सब कर मिटै खभारू ॥
सुनि पति बचन कहति बैदेही। सुनहु प्रानपति परम सनेही ॥
प्रभु करुनामय परम बिबेकी। तनु तजि रहति छाँह किमि छेंकी ॥
प्रभा जाइ कहँ भानु बिहाई। कहँ चंद्रिका चंदु तजि जाई ॥
पतिहि प्रेममय बिनय सुनाई। कहति सचिव सन गिरा सुहाई ॥
तुम्ह पितु ससुर सरिस हितकारी। उतरु देउँ फिरि अनुचित भारी ॥

आरति बस सनमुख भइउँ बिलगु न मानब तात।
आरजसुत पद कमल बिनु बादि जहाँ लगि नात ॥

पितु बैभव बिलास मैं डीठा। नृप मनि मुकुट मिलित पद पीठा ॥
सुख निधान अस पितु गृह मोरें। पिय बिहीन मन भाव न भोरें ॥
ससुर चक्कवइ कोसलराऊ। भुवन चारिदस प्रगट प्रभाऊ ॥
आगें होइ जेहि सुरपति लेई। अरध सिंघासन आसनु देई ॥

ससुरु एतादृस अवध निवासू। प्रिय परिवारु मातु सम सासू॥
बिनु रघुपति पद पदुम परागा। मोहि केउ सपनेहुँ सुखद न लागा॥
अगम पंथ बनभूमि पहारा। करि केहरि सर सरित अपारा॥
कोल किरात कुरंग बिहंगा। मोहि सब सुखद प्रानपति संगा॥

सासु ससुर सन मोरि हुँति बिनय करबि परि पायँ।
मोर सोचु जनि करिअ कछु मैं बन सुखी सुभायँ॥

प्राननाथ प्रिय देवर साथा। बीर धुरीन धरें धनु भाथा।
नहिं मग श्रमु भ्रमु दुख मन मोरें। मोहि लगि सोचु करिअ जनि भोरें॥
सुनि सुमंत्रु सिय सीतलि बानी। भयउ बिकल जनु फनि मनि हानी॥
नयन सूझ नहिं सुनइ न काना। कहि न सकइ कछु अति अकुलाना॥
राम प्रबोधु कीन्ह बहु भाँती। तदपि होति नहिं सीतलि छाती॥
जतन अनेक साथ हित कीन्हें। उचित उतर रघुनंदन दीन्हें॥
मेटि जाइ नहिं राम रजाई। कठिन करम गति कछु न बसाई॥
राम लखन सिय पद सिरु नाई। फिरेउ बनिक जिमि मूर गवाँई॥

रथु हाँकेउ हय राम तन हेरि हेरि हिहिनाहिं।
देखि निषाद बिषादबस धुनहिं सीस पछिताहिं॥

जासु बियोग बिकल पसु ऐसें। प्रजा मातु पितु जिइहहिं कैसें॥
बरबस राम सुमंत्रु पठाए। सुरसरि तीर आपु तब आए॥
मागी नाव न केवटु आना। कहइ तुम्हार मरमु मैं जाना॥
चरन कमल रज कहुं सबु कहई। मानुष करनि मूरि कछु अहई॥
छुअत सिला भइ नारि सुहाई। पाहन तें न काठ कठिनाई॥
तरनिउ मुनि घरिनी होइ जाई। बाट परइ मोरि नाव उड़ाई॥

एहिं प्रतिपालउँ सबु परिवारू । नहिं जानऊँ कछु अउर कबारू ॥
जौं प्रभु पार अवसि गा चहहू । मोहि पद पदुम पखारन कहहू ॥

पद कमल धोइ चढ़ाइ नाव न नाथ उतराई चहौं ।
मोहि राम राउरि आन दसरथ सपथ सब साची कहौं ॥
बरु तीर मारहुँ लखनु पै जब लगि न पाय पखारिहौं ।
तब लगि न तुलसीदास नाथ कृपाल पारु उतारिहौं ॥

सुनि केवट के बैन प्रेम लपेटे अटपटे ।
बिहसे करुनाऐन चितइ जानकी लखन तन ॥

कृपासिंधु बोले मुसुकाई । सोइ करु जेहिं तव नाव न जाई ॥
बेगि आनु जल पाय पखारू । होत बिलंबु उतारहि पारू ॥
जासु नाम सुमिरत एक बारा । उतरहिं नर भवसिंधु अपारा ॥
सोइ कृपालु केवटहि निहोरा । जेहिं जगु किय तिहु पगहु ते थोरा ॥
पद नख निरखि देवसरि हरषी । सुनि प्रभु बचन मोहँ मति करषी ॥
केवट राम रजायसु पावा । पानि कठवता भरि लेइ आवा ॥
अति आनंद उमगि अनुरागा । चरन सरोज पखारन लागा ॥
बरषि सुमन सुर सकल सिहाहीं । एहि सम पुन्यपुंज कोउ नाहीं ॥

पद पखारि जलु पान करि आपु सहित परिवार ।
पितर पारु करि प्रभुहि पुनि मुदित गयउ लेइ पार ॥

उतरि ठाढ़ भए सुरसरि रेता । सीय रामु गुह लखन समेता ॥
केवट उतरि दंडवत कीन्हा । प्रभुहि सकुच एहि नहिं कछु दीन्हा ॥
पिय हिय की सिय जाननिहारी । मनि मुदरी मन मुदित उतारी ॥
कहेउ कृपाल लेहि उतराई । केवट चरन गहे अकुलाई ॥

नाथ आजु मैं काह न पावा । मिटे दोष दुख दारिद दावा ॥
बहुत काल मैं कीन्हि मजूरी । आजु दीन्ह बिधि बनि भलि भूरी ॥
अब कछु नाथ न चाहिअ मोरें । दीनदयाल अनुग्रह तोरें ॥
फिरती बार मोहि जो देबा । सो प्रसादु मैं सिर धरि लेबा ॥

बहुत कीन्ह प्रभु लखन सियँ नहिं कछु केवटु लेइ ।
बिदा कीन्ह करुनायतन भगति बिमल बरु देइ ॥

तब मज्जनु करि रघुकुल नाथा । पूजि पारथिव नायउ माथा ॥
सियँ सुरसरिहि कहेउ कर जोरी । मातु मनोरथ पुरउबि मोरी ॥
पति देवर सँग कुसल बहोरी । आइ करौं जेहिं पूजा तोरी ॥
सुनि सिय बिनय प्रेम रस सानी । भइ तब बिमल बारि बर बानी ॥
सुनु रघुबीर प्रिया बैदेही । तब प्रभाउ जग बिदित न केही ॥
लोकप होहिं बिलोकत तोरें । तोहि सेवहिं सब सिधि कर जोरें ॥
तुम्ह जो हमहि बड़ि बिनय सुनाई । कृपा कीन्हि मोहि दीन्हि बड़ाई ॥
तदपि देबि मैं देबि असीसा । सफल होन हित निज बागीसा ॥

प्राननाथ देवर सहित कुसल कोसला आइ ।
पूजिहि सब मनका मना सुजसु रहिहि जग छाइ ॥

गंग बचन सुनि मूला । मुदित सीय सुरसरि अनुकूला ॥
तब प्रभु गुहहि कहेउ घर जाहू । सुनत सूख मुखु भा उर दाहू ॥
दीन बचन गुह कह कर जोरी । बिनय सुनहु रघुकुलमनि मोरी ॥
नाथ साथ रहि पंथु देखाई । करि दिन चारि चरन सेवकाई ॥
जेहिं बन जाइ रहब रघुराई । परनकुटी मैं करबि सुहाई ॥
तब मोहि कहँ जसि देब रजाई । सोइ करिहउँ रघुबीर दोहाई ॥

सहज सनेह राम लखि तासू । संग लीन्ह गुह हृदयँ हुलासू ॥
पुनि गुहँ ग्याति बोलि सब लीन्हे । करि परितोषु बिदा तब कीन्हे ॥

तब गनपति सिव सुमिरि प्रभु नाइ सुरसरिहि माथ ।
सखा अनुज सिय सहित बन गवनु कीन्ह रघुनाथ ॥

तेहि दिन भयउ बिटप तर बासू । लखन सखाँ सब कीन्ह सुपासू ॥
प्रात प्रातकृत करि रघुराई । तीरथराजु दीख प्रभु जाई ॥
सचिव सत्य श्रद्धा प्रिय नारी । माधव सरिस मीतु हितकारी ॥
चारि पदारथ भरा भँडारू । पुन्य प्रदेस देस अति चारू ॥
छेत्रु अगम गढ़ु गाढ़ सुहावा । सपनेहुँ नहिं प्रतिपच्छिन्ह पावा ॥
सेन सकल तीरथ बर बीरा । कलुष अनीक दलन रनधीरा ॥
संगमु सिंहासनु सुठि सोहा । छत्रु अखयबटु मुनि मनु मोहा ॥
चवँर जमुन अरु गंग तरंगा । देखि होहिं दुख दारिद भंगा ॥

सेवहिं सुकृती साधु सुचि पावहिं सब मनकाम ।
बंदी बेद पुरान गन कहहिं बिमल गुन ग्राम ॥

को कहि सकइ प्रयाग प्रभाऊ । कलुष पुंज कुंजर मृगराऊ ॥
अस तीरथपति देखि सुहावा । सुख सागर रघुबर सुखु पावा ॥
कहि सिय लखनहि सखहि सुनाई । श्रीमुख तीरथराज बडाई ॥
करि प्रनामु देखत बन बागा । कहत महातम अति अनुरागा ॥
एहि बिधि आइ बिलोकी बेनी । सुमिरत सकल सुमंगल देनी ॥
मुदित नहाइ कीन्हि सिव सेवा । पूजि जथाबिधि तीरथ देवा ॥
तब प्रभु भरद्वाज पहिं आए । करत दंडवत मुनि उर लाए ॥
मुनि मन मोद न कछु कहि जाई। ब्रह्मानंद रासि जनु पाई ॥

दीन्हि असीस मुनीस उर अति अनंदु अस जानि।
लोचन गोचर सुकृत फल मनहुँ किए बिधि आनि॥

कुसल प्रस्न करि आसन दीन्हे। पूजि प्रेम परिपूरन कीन्हे॥
कंद मूल फल अंकुर नीके। दिए आनि मुनि मनहुँ अमी के॥
सीय लखन जन सहित सुहाए। अति रुचि राम मूल फल खाए॥
भए बिगतश्रम रामु सुखारे। भरद्वाज मृदु बचन उचारे॥
आजु सुफल तपु तीरथ त्यागू। आजु सुफल जप जोग बिरागू॥
सफल सकल सुभ साधन साजू। राम तुम्हहि अवलोकत आजू॥
लाभ अवधि सुख अवधि न दूजी। तुम्हरें दरस आस सब पूजी॥
अब करि कृपा देहु बर एहू। निज पद सरसिज सहज सनेहू॥

करम बचन मन छाड़ि छलु जब लगि जनु न तुम्हार।
तब लगि सुखु सपनेहुँ नहीं किएँ कोटि उपचार॥

सुनि मुनि बचन रामु सकुचाने। भाव भगति आनंद अघाने॥
तब रघुबर मुनि सुजसु सुहावा। कोटि भाँति कहि सबहि सुनावा॥
सो बड़ सो सब गुन गन गेहू। जेहि मुनीस तुम्ह आदर देहू॥
मुनि रघुबीर परसपर नवहीं। बचन अगोचर सुखु अनुभवहीं॥
यह सुधि पाइ प्रयाग निवासी। बटु तापस मुनि सिद्ध उदासी॥
भरद्वाज आश्रम सब आए। देखन दसरथ सुअन सुहाए॥
राम प्रनाम कीन्ह सब काहू। मुदित भए लहि लोयन लाहू॥
देहिं असीस परम सुखु पाई। फिरे सराहत सुंदरताई॥

राम कीन्ह बिश्राम निसि प्रात प्रयाग नहाइ।
चले सहित सिय लखन जन मुदित मुनिहि सिरु नाइ॥

राम सप्रेम कहेउ मुनि पाहीं । नाथ कहिअ हम केहि मग जाहीं ॥
मुनि मन बिहसि राम सन कहहीं । सुगम सकल मग तुम्ह कहुँ अहहीं ॥
साथ लागि मुनि सिष्य बोलाए । सुनि मन मुदित पचासक आए ॥
सबन्हि राम पर प्रेम अपारा । सकल कहहिं मगु दीख हमारा ॥
मुनि बटु चारि संग तब दीन्हे । जिन्हे बहु जनम सुकृत सब कीन्हे ॥
करि प्रनामु रिषि आयसु पाई । प्रमुदित हृदयँ चले रघुराई ॥
ग्राम निकट जब निकसहिं जाई । देखहिं दरसु नारि नर धाई ॥
होहिं सनाथ जनम फलु पाई । फिरहिं दुखित मनु संग पठाई ॥

बिदा किए बटु बिनय करि फिरे पाइ मन काम ।
उतरि नहाए जमुन जल जो सरीर सम स्याम ॥

सुनत तीरबासी नर नारी । धाए निज निज काज बिसारी ॥
लखन राम सिय सुंदरताई । देखि करहिं निज भाग्य बडाई ॥
अति लालसा बसहिं मन माहीं । नाउँ गाउँ बूझत सकुचाहीं ॥
जे तिन्ह महुँ बयबिरिध सयाने । तिन्ह करि जुगुति रामु पहिचाने ॥
सकल कथा तिन्ह सबहि सुनाई । बनहि चले पितु आयसु पाई ॥
सुनि सबिषाद सकल पछिताहीं । रानी रायँ कीन्ह भल नाहीं ॥
तेहि अवसर एक तापसु आवा । तेज पुंज लघुबयस सुहावा ॥
कबि अलखित गति बेषु बिरागी । मन क्रम बचन राम अनुरागी ॥

सजल नयन तन पुलकि निज इष्टदेउ पहिचानि ।
परेउ दंड जिमि धरनितल दसा न जाइ बखानि ॥

राम सप्रेम पुलकि उर लावा । परम रंक जनु पारसु पावा ॥
मनहुँ प्रेमु परमारथु दोऊ । मिलत धरें तन कह सबु कोऊ ॥

बहुरि लखन पायन्ह सोइ लागा । लीन्ह उठाइ उमगि अनुरागा ॥
पुनि सिय चरन धूरि धरि सीसा । जननि जानि सिसु दीन्हि असीसा ॥
कीन्ह निषाद दंडवत तेही । मिलेउ मुदित लखि राम सनेही ॥
पिअत नयन पुट रूपु पियूषा । मुदित सुअसनु पाइ जिमि भूखा ॥
ते पितु मातु कहहु सखि कैसे । जिन्ह पठए बन बालक ऐसे ॥
राम लखन सिय रूपु निहारी । होहिं सनेह बिकल नर नारी ॥

तब रघुबीर अनेक बिधि सखहि सिखावनु दीन्ह ।
राम रजायसु सीस धरि भवन गवनु तेइँ कीन्ह ॥

पुनि सियँ राम लखन कर जोरी । जमुनहि कीन्ह प्रनामु बहोरी ॥
चले ससीय मुदित दोउ भाई । रबितनुजा कइ करत बड़ाई ॥
पथिक अनेक मिलहिं मग जाता । कहहिं सप्रेम देखि दोउ भ्राता ॥
राज लखन सब अंग तुम्हारें । देखि सोचु अति हृदय हमारें ॥
मारग चलहु पयादेहि पाएँ । ज्योतिषु झूठ हमारें भाएँ ॥
अगमु पंथु गिरि कानन भारी । तेहि महँ साथ नारि सुकुमारी ॥
करि केहरि बन जाइ न जोई । हम सँग चलहिं जो आयसु होई ॥
जाब जहाँ लगि तहँ पहुँचाई । फिरब बहोरि तुम्हहि सिरु नाई ॥

एहि बिधि पूँछहिं प्रेम बस पुलक गात जलु नैन ॥
कृपासिंधु फेरहिं तिन्हहि कहि बिनीत मृदु बैन ॥

जे पुर गाँव बसहिं मग माहीं । तिन्हहि नाग सुर नगर सिहाहीं ॥
केहि सुकृतीं केहि घरीं बसाए । धन्य पुन्यमय परम सुहाए ॥
जहँ जहँ राम चरन चलि जाहीं । तिन्ह समान अमरावति नाहीं ॥
पुन्य पुंज मग निकट निवासी । तिन्हहि सराहहिं सुरपुर बासी ॥

जे भरि नयन बिलोकहिं रामहि। सीता लखन सहित घनस्यामहि ।।
जे सर सरित राम अवगाहहिं। तिन्हहि देव सर सरित सराहहिं ।।
जेहि तरु तर प्रभु बैठहिं जाईं। करहिं कलपतरु तासु बड़ाई ।।
परसि राम पद पदुम परागा। मानति भूमि भूरि निज भागा ।।

छाँह करहिं घन बिबुधगन बरषहिं सुमन सिहाहिं।
देखत गिरि बन बिहग मृग रामु चले मग जाहिं ।।

सीता लखन सहित रघुराई। गाँव निकट जब निकसहिं जाई।।
सुनि सब बाल वृद्ध नर नारी। चलहिं तुरत गृह काजु बिसारी ।।
राम लखन सिय रुप निहारी। पाइ नयन फलु होहिं सुखारी ।।
सजल बिलोचन पुलक सरीरा। सब भए मगन देखि दोउ बीरा ।।
बरनि न जाइ दसा तिन्ह केरी। लहि जनु रंकन्ह सुर मनि ढेरी ।।
एकन्ह एक बोलि सिख देहीं। लोचन लाहु लेहु छन एहीं ।।
रामहि देखि एक अनुरागे। चितवत चले जाहिं सँग लागे ।।
एक नयन मग छबि उर आनी। होहिं सिथिल तन मन बर बानी ।।

एक देखि बट छाँह भलि डासि मृदुल तृन पात।
कहहिं गवाँइअ छिनुकु श्रमु गवनब अबहिं कि प्रात ।।

एक कलस भरि आनहिं पानी। अँचइअ नाथ कहहिं मृदु बानी ।।
सुनि प्रिय बचन प्रीति अति देखी। राम कृपाल सुसील बिसेषी ।।
जानी श्रमित सीय मन माहीं। घरिक बिलंबु कीन्ह बट छाहीं ।।
मुदित नारि नर देखहिं सोभा। रूप अनूप नयन मनु लोभा ।।
एकटक सब सोहहिं चहुं ओरा। रामचंद्र मुख चंद चकोरा ।।
तरुन तमाल बरन तनु सोहा। देखत कोटि मदन मनु मोहा ।।

दामिनि बरन लखन सुठि नीके। नख सिख सुभग भावते जी के ॥
मुनिपट कटिन्ह कसें तूनीरा। सोहहिं कर कमलनि धनु तीरा ॥

जटा मुकुट सीसनि सुभग उर भुज नयन बिसाल।
सरद परब बिधु बदन बर लसत स्वेद कन जाल ॥

बरनि न जाइ मनोहर जोरी। सोभा बहुत थोरि मति मोरी ॥
राम लखन सिय सुन्दरताई। सब चितवहिं चित मन मति लाई॥
थके नारि नर प्रेम पिआसे। मनहुं मृगी मृग देखि दिआ से ॥
सीय समीप ग्रामतिय जाहीं। पूँछत अति सनेहँ सकुचाहीं ॥
बार बार सब लागहिं पाएँ। कहहिं बचन मृदु सरल सुभाएँ ॥
राजकुमारि बिनय हम करहीं। तिय सुभायँ कछु पूँछत डरहीं ॥
स्वामिनि अबिनय छमबि हमारी। बिलगु न मानब जानि गवाँरी ॥
राजकुअँर दोउ सहज सलोने। इन्ह तें लही दुति मरकत सोने ॥

स्यामल गौर किसोर बर सुन्दर सुषमा ऐन।
सरद सर्बरीनाथ मुखु सरद सरोरुह नैन ॥

कोटि मनोज लजावनिहारे। सुमुखि कहहु को आहिं तुम्हारे ॥
सुनि सनेहमय मंजुल बानी। सकुची सिय मन महुं मुसुकानी ॥
तिन्हहि बिलोकि बिलोकति धरनी। दुहुं सकोच सकुचति बरबरनी ॥
सकुचि सप्रेम बाल मृग नयनी। बोली मधुर बचन पिकबयनी ॥
सहज सुभाय सुभग तन गोरे। नामु लखनु लघु देवर मोरे ॥
बहुरि बदनु बिधु अंचल ढाँकी। पिय तन चितइ भौंह करि बाँकी॥
खंजन मंजु तिरीछे नयननि। निज पति कहेउ तिन्हहि सियँ सयननि॥
भई मुदित सब ग्रामबधूटीं। रंकन्ह राय रासि जनु लूटीं ॥

अति सप्रेम सिय पायँ परि बहुबिधि देहिं असीस ।
सदा सोहागिनि होहु तुम्ह जब लगि महि अहि सीस ॥

पारबती सम पतिप्रिय होहू । देबि न हम पर छाड़ब छोहू ॥
पुनि पुनि बिनय करिअ कर जोरी । जौं एहि मारग फिरिअ बहोरी ॥
दरसनु देब जानि निज दासी । लखीं सीयँ सब प्रेम पिआसी ॥
मधुर बचन कहि कहि परितोषीं । जनु कुमुदिनीं कौमुदीं पोषीं ॥
तबहिं लखन रघुबर रुख जानी । पूँछेउ मगु लोगन्हि मृदु बानी ॥
सुनत नारि नर भए दुखारी । पुलकित गात बिलोचन बारी ॥
मिटा मोदु मन भए मलीने । बिधि निधि दीन्ह लेत जनु छीने ॥
समुझि करम गति धीरजु कीन्हा । सोधि सुगम मगु तिन्ह कहि दीन्हा ॥

लखन जानकी सहित तब गवनु कीन्ह रघुनाथ ।
फेरे सब प्रिय बचन कहि लिए लाइ मन साथ ॥

फिरत नारि नर अति पछिताहीं । दैअहि दोषु देहिं मन माहीं ॥
सहित बिषाद परसपर कहहीं । बिधि करतब उलटे सब अहहीं ॥
निपट निरंकुस निठुर निसंकू । जेहिं ससि कीन्ह सरुज सकलंकू ॥
रूख कलपतरु सागरु खारा । तेहिं पठए बन राजकुमारा ॥
जौं पै इन्हहि दीन्ह बनबासू । कीन्ह बादि बिधि भोग बिलासू ॥
ए बिचरहिं मग बिनु पदत्राना । रचे बादि बिधि बाहन नाना ॥
ए महि परहिं डासि कुस पाता । सुभग सेज कत सृजत बिधाता ॥
तरुबर बास इन्हहि बिधि दीन्हा । धवल धाम रचि रचि श्रमु कीन्हा ॥

जौं ए मुनि पट धर जटिल सुन्दर सुठि सुकुमार ।
बिबिध भाँति भूषन बसन बादि किए करतार ॥

जौं ए कंद मूल फल खाहीं। बादि सुधादि असन जग माहीं ॥
एक कहहिं ए सहज सुहाए। आपु प्रगट भए बिधि न बनाए ॥
जहँ लगि बेद कही बिधि करनी। श्रवन नयन मन गोचर बरनी ॥
देखहु खोजि भुअन दस चारी। कहँ अस पुरुष कहाँ असि नारी ॥
इन्हहि देखि बिधि मनु अनुरागा। पटतर जोग बनावै लागा ॥
कीन्ह बहुत श्रम ऐक न आए। तेहिं इरिषा बन आनि दुराए ॥
एक कहहिं हम बहुत न जानहिं। आपुहि परम धन्य करि मानहिं ॥
ते पुनि पुन्यपुंज हम लेखे। जे देखिहहिं देखिहहिं जिन्ह देखे॥

एहि बिधि कहि कहि बचन प्रिय लेहिं नयन भरि नीर।
किमि चलिहहिं मारग अगम सुठि सुकुमार सरीर ॥

नारि सनेह बिकल बस होहीं। चकई साँझ समय जनु सोहीं ॥
मृदु पद कमल कठिन मगु जानी। गहबरि हृदयँ कहहिं बर बानी ॥
परसत मृदुल चरन अरुनारे। सकुचति महि जिमि हृदय हमारे॥
जौं जगदीस इन्हहिं बनु दीन्हा। कस न सुमनमय मारगु कीन्हा ॥
जौं मागा पाइअ बिधि पाहीं। ए रखिअहिं सखि आँखिन्ह माहीं॥
जे नर नारि न अवसर आए। तिन्ह सिय रामु न देखन पाए ॥
सुनि सुरूपु बूझहिं अकुलाई। अब लगि गए कहाँ लगि भाई ॥
समरथ धाइ बिलोकहिं जाई। प्रमुदित फिरहिं जनमफलु पाई ॥

अबला बालक बृद्ध जन कर मीजहिं पछितांहि।
होहिं प्रेमबस लोग इमि रामु जहाँ जहँ जांहि ॥

गाँव गावँ अस होइ अनंदू। देखि भानुकुल कैरव चंदू ॥
जे कछु समाचार सुनि पावहिं। ते नृप रानिहि दोसु लगावहिं ॥

कहहिं एक अति भल नरनाहू। दीन्ह हमहि जोइ लोचन लाहू॥
कहहिं परसपर लोग लोगाईं। बातें सरल सनेह सुहाईं॥
ते पितु मातु धन्य जिन्ह जाए। धन्य सो नगरु जहाँ तें आए॥
धन्य सो देसु सैलु बन गाऊँ। जहँ जहँ जाहिं धन्य सोइ ठाऊँ॥
सुखु पायउ बिरंचि रचि तेही। ए जेहि के सब भाँति सनेही॥
राम लखन पथि कथा सुहाई। रही सकल मग कानन छाई॥

एहि बिधि रघुकुल कमल रबि मग लोगन्ह सुख देत।
जाहिं चले देखत बिपिन सिय सौमित्रि समेत॥

आगें रामु लखनु बने पाछें। तापस बेष बिराजत काछें॥
उभय बीच सिय सोहति कैसें। ब्रह्म जीव बिच माया जैसें॥
बहुरि कहउँ छबि जसि मन बसई। जनु मधु मदन मध्यरति लसई॥
उपमा बहुरि कहउँ जियँ जोही। जनु बुध बिधु बिचरोहिनि सोही॥
प्रभु पद रेख बीच बिच सीता। धरति चरन मग चलति सभीता॥
सीय राम पद अंक बराएँ। लखन चलहिं मगु दाहिन लाएँ॥
राम लखन सिय प्रीति सुहाई। बचन अगोचर किमि कहि जाई॥
खग मृग मगन देखि छबि होहीं। लिए चोरि चित राम बटोहीं॥

जिन्ह जिन्ह देखे पथिक प्रिय सिय समेत दोउ भाइ।
भव मगु अगमु अनंदु तेइ बिनु श्रम रहे सिराइ॥

[रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड से।]

लंका-दहन

बालव-बरुन-बिधि-बनतें सुहावनो
  दसाननको काननु बसंतको सिंगारु सो।
समय पुराने पात परत, डरत बातु,
  पालत लालत रति-मारको बिहारु सो॥
देखें बर बापिका तड़ाग बागको बनाउ,
  रागबस भो बिरागी पवनकुमारु सो।
सीयकी दसा बिलोकि बिटप, असोक तर,
  'तुलसी' बिलोक्यो सो तिलोक-सोक-सारु सो॥

माली मेघमाल, बनपाल बिकराल भट,
  नीकें सब काल सींचैं सुधासार नीरके।
मेघनाद तें दुलारो, प्रान तें पिआरो बागु,
  अति अनुरागु जियँ जातुधान धीर कें॥
'तुलसी' सो जानि-सुनि, सीयको दरसु पाइ,
  पैठो बाटिकाँ बजाइ बल रघुबीर कें।
बिद्यमान देखत दसाननको काननु सो
  तहस-नहस कियो साहसी समीर कें॥

बसन बटोरि बोरि-बोरि तेल तमीचर,
  खोरि-खोरि धाइ आइ बाँधत लँगूर हैं।

तैसो कपि कौतुकी डेरात ढीले गात कै-कै,
लातके अघात सहै, जीमें कहै, कूर हैं ॥
बाल किलकारी कै-कै, तारी दै-दै गारी देत,
पाछें लागे, बाजत निसान ढोल तूर हैं ।
बालधी बढ़न लागी, ठौर-ठौर दीन्ही आगी,
बिंधिकी दवारि कैधौं कोटिसत सूर हैं ॥

लाइ-लाइ आगि भागे बालजाल जहाँ-तहाँ,
लघु ह्वै निबुकि गिरि मेरुतें बिसाल भो ।
कौतुकी कपीसु कूदि कनक-कँगूराँ चढ़्यो,
रावन-भवन चढ़ि ठाढ़ो तेहि काल भो ॥
'तुलसी' बिराज्यो ब्योम बालधी पसारि भारी,
देखें हहरात भट, कालु सो कराल भो ।
तेजको निधानु मानो कोटिक कृसानु-भानु,
नख बिकराल, मुखु तैसो रिस लाल भो ॥

बालधी बिसाल बिकराल, ज्वालजाल मानो
लंक लीलिबेको काल रसना पसारी है ।
कैधौं ब्योमबीथिका भरे हैं भूरि धूमकेतु,
बीररस बीर तरवारि सो उघारी है ॥
'तुलसी' सुरेस-चापु, कैधौं दामिनि-कलापु,
कैधौं चली मेरु तें कृसानु-सरि भारी है ।
देखें जातुधान-जातुधानीं अकुलानी कहैं,
काननु उजार्‌यो, अब नगरु प्रजारि है ॥

जहाँ-तहाँ बुबुक बिलोकि बुबुकारी देत,
जरत निकेतु, धावौ, धावौ, लागी आगि रे।
कहाँ तातु-मातु, भ्रात-भगिनी, भामिनी-भामी,
ढोटा छोटे छोहरा अभागे भोंडे भागि रे।।
हाथी छोरौ, घोरा छोरौ, महिष-बृषभ छोरौ
छेरी छोरौ, सोवै सो, जगावौ, जागि जागि रे।
'तुलसी' बिलोकि अकुलानी जातुधानी कहैं,
बार-बार कह्यौं, पिय! कपिसों न लागि रे।।

देखि ज्वालाजालु, हाहाकारु दसकंध सुनि,
कह्यौ, धरो, धरो, धाए बीर बलवान हैं।
लिएँ सूल-सेल, पास-परिघ, प्रचंड दंड,
भाजन सनीर, धीर धरें धनु बान हैं।।
'तुलसी' समिध सौंज, लंक जग्यकुंडु लखि,
जातुधान पुंगीफल जव तिल धान हैं।
स्रुवा सो लँगूल, बलमूल प्रतिकूल हबि,
स्वाहा महा हाँकि हाँकि हुनैं हनुमान हैं।।

गाज्यो कपि गाज ज्यों, बिराज्यो ज्वाल जालजुत,
भाजे बीर धीर, अकुलाइ उठ्यो रावनो।
धावौ, धावौ, धरौ, सुनि धाए जातुधान धारि,
बारिधारा उलदै जलदु जौन सावनो।।
लपट-झपट झहराने, हहराने बात,
भहराने भट, पर्‌यो प्रबल परावनो।

ढकनि ढकेलि, पेलि सचिव चले लै ठेलि,
नाथ न चलैगो बलु, अनलु भयावनो ॥
बड़ो बिकराल बेषु देखि, सुनि सिंघनादु,
उठ्यो मेघनादु, सबिषाद कहै रावनो ।
बेग जित्यो मारुतु, प्रताप मारतंड कोटि,
कालऊ करालताँ, बडाई जित्यो बावनो ॥
'तुलसी' सयाने जातुधान पछिताने कहैं,
जाको ऐसो दूतु, सो तो साहेबु अबै आवनो ।
काहेको कुसल रोषें राम बामदेवहू की,
बिषम बलीसों बादि बैरको बढ़ावनो ॥

पानी! पानी! पानी! सब रानीं अकुलानी कहैं,
जाति हैं परानी, गति जानी गजचालि है ।
बसन बिसारें, मनिभूषन सँभारत न,
आनन सुखाने, कहैं, क्योंहू कोऊ पालि है ॥
'तुलसी' मँदोवै मीजि हाथ, धुनि माथ कहै,
काहूँ कान कियो न, मैं कह्यो केतो कालि है ।
बापुरें बिभीषन पुकारि बार-बार कह्यो,
बानरु बड़ी बलाइ घने घर घालिहै ॥

काननु उजार्‌यो, तो उजार्‌यो, न बिगार्‌यो कछु,
बानरु बेचारो बाँधि आन्यो हठि हारसों ।
निपट निडर देखि काहूँ न लख्यो बिसेषि,
दीन्हों ना छड़ाइ कहि कुलके कुठारसों ॥

छोटे औ बड़ेरे मेरे पूतऊ अनेरे सब,
सांपनि सों खेलें, मेलैं गरे छुराधार सों ।
'तुलसी' मँदोवै रोइ-रोइ कै बिगोवै आपु
बार-बार कह्यो मैं पुकारि दाढ़ीजारसों ॥

रानीं अकुलानी सब डाढ़त परानी जाहिं,
सकै न बिलोकि बेषु केसरीकुमारको ।
मीजि-मीजि हाथ, धुनै माथ दसमाथ-तिय,
'तुलसी' तिलौ न भयो बाहेर अगारको ॥
सबु असबाबु डाढो, मैं न काढ़ो, तैं न काढ़ो,
जियकी परी, संभारै सहन-भँडार को ।
खीझति मँदोवै सबिषाद देखि मेघनादु,
बयो लुनिअत सब याही दाढ़ीजारको ॥

रावनकी रानीं बिलखानी कहै जातुधानीं,
हा हा ! कोऊ कहै बीसबाहु दसमाथ सों ।
काहे मेघनाद ! काहे, काहे रे मदोदर ! तूँ,
धीरजु न देत, लाइ लेत क्यों न हाथसों ॥
काहे अतिकाय ! काहे, काहे रे अकंपन !
अभागे तीय त्यागे भोंड़े भागे जात साथसों ।
'तुलसी' बढ़ाई बादि सालतें बिसाल बाहैं,
याहीं बल बालिसो बिरोधु रघुनाथसों ॥

हाट-बाट, कोट-ओट, अटनि अगार, पौरि
खोरि-खोरि दौरि-दौरि दीन्ही दीन्ही अति आगि है।

आरत पुकारत, सँभारत न कोऊ काहू,
व्याकुल जहाँ सो तहाँ लोक चले भागि हैं ।।
बालधी फिरावै, बार-बार झहरावै झरैं
बुँदिया-सी, लंक पघिलाइ पाग पागि है ।
'तुलसी' बिलोकि अकुलानी जातुधानीं कहें,
चित्रहूके कपि सों निसाचरु न लगि है ।।

लगी, लागी आगि, भागि-भागि चले जहाँ-तहाँ,
धीयको न माय, बाप पूत न सँभारहीं ।
छूटे बार, बसन उघारे, धूम-धुन्द अन्ध,
कहैं बारे-बूढ़े 'बारि बारि' बार बारहीं ।।
हय हिहिनात, भागे जात घहरात गज,
भारी भीर ठेलि-पेलि रौंदि खौंदि डारहीं ।
नाम लै चिलात, बिललात, अकुलात अति,
'तात तात ! तौंसिअत, झौंसिअत, झारहीं' ।।

लपट कराल ज्वालजालमाल दहूँ दिसि,
धूम अकुलाने, पहिचानै कौन काहि रे ।
पानीको ललात, बिललात जरे गात जात,
परे पाइमाल जात 'भ्रात ! तूँ निबाहि रे' ।।
प्रिया! तूँ पराहि, नाथ! नाथ! तूँ पराहि, बाप!
बाप ! तूँ पराहि, पूत ! पूत ! तूँ पराहि रे ।
'तुलसी' बिलोकि लोग व्याकुल बेहाल कहें,
लेहि दससीस अब बीस चख चाहि रे ।।

बीथिका-बजार प्रति, अटनि अगार प्रति,
पवरि-पगार प्रति बानरु बिलोकिए ।
अध-ऊर्ध बानर, बिदिसि-दिसि बानरु है,
मानो रह्यो है भरि बानरु तिलोकिएँ ।।
मूदें आँखि हियमें, उघारें आँखि आगें ठाढ़ो,
धाइ जाइ जहाँ-तहाँ, और कोऊ कोकिए ।
लेहु, अब लेहु, तब कोउ न सिखावो मानो,
सोई सतराइ जाइ, जाहि-जाहि रोकिए ।।

एक करैं धौंज, एक कहैं, काढ़ौ सौंज, एक
औंजि, पानी पीकै कहैं बनत न आवनो ।
एक परे गाढ़े, एक डाढ़त हीं काढ़े एक
देखत हैं ठाढ़े, कहैं, पावकु भयावनो ।।
'तुलसी' कहत एक 'नीकें हाथ लाए कपि,
अजहूँ न छाड़ै बालु गालको बजावनो' ।
'धाओ रे, बुझाओ रे' 'कि बावरे हौ रावरे, या
औरै आगि लागि, न बुझावै सिंधु सावनो' ।।

कोपि दसकंध तब प्रलयपयोद बोले,
रावन-रजाइ धाए आए जूथ जोरि कै ।
कह्यो लंकपति लंक बरत, बुताओ बेगि
बानरु बहाइ मारौ महाबारि बोरि कै ।।
'भलें नाथ !' नाइ माथ चले पाथप्रदनाथ,
बरषैं मुसलधार बार-बार घोरि कै ।
जीवनतें जागी आगी, चपरि चौगुनी लागी,
'तुलसी' भभरि मेघ भागे मुखु मोरि कै ।।

इहाँ ज्वाल जरे जात, उहाँ ग्लानि गरे गात,
सूखे सकुचात सब, कहत पुकार हैं।
'जुग-षट भानु देखे, प्रलयकृसानु देखे,
सेष-मुख-अनल बिलोके बार-बार हैं ॥
'तुलसी' सुन्यो न कान सलिलु सर्पी-समान,
अति अचिरिजु कियो केसरीकुमार हैं'।
बारिद-बचन सुनि धुने सीस सचिवन्ह,
कहैं दससीस ! 'ईस-बामता-बिकार हैं' ॥

'पावकु, पवनु, पानी, भानु, हिमवानु, जमु,
कालु, लोकपाल मेरे, डर डावाँडोल हैं।
साहेबु महेसु, सदा संकित रमेसु मोहिं,
महातप साहस बिरंचि लीन्हें मोल हैं ॥
'तुलसी' तिलोक आजु दूजो न बिराजै राजु,
बाजे-बाजे राजनिके बेटा-बेटी ओल हैं।
को है ईस नामको, जो बाम होत मोहूसे को,
मालवान ! रावरेके बावरे-से बोल हैं' ॥

भूमि भूमिपाल, ब्यालपालक पताल, नाक-
पाल, लोकपाल जेते, सुभट-समाजु है।
कहै मालवान, जातुधानपति ! रावरे को
मनहूँ अकाजु आनै, ऐसो कौन आजु है ॥
रामकोहु पावकु, समीरु सीय-स्वासु, कीसु,
ईस-बामता बिलोकु, बानरको ब्याजु है।
जारत पचारि फेरि-फेरि सो निसंक लंक,
जहाँ बाँको बीरु तोसो सूर-सिरताजु है ॥

पान-पकवान बिधि नाना के, सँधानो, सीधो,
बिबिध-बिधान धान बरत बखारहीं ।
कनककिरीट कोटि पलँग, पेटारे, पीठ
काढ़त कहार सब जरे भरे भारहीं ॥
प्रबल अनल बाढ़ें जहाँ काढ़े तहाँ डाढ़े,
झपट-लपट भरे भवन-भँडारहीं ।
'तुलसी' अगारु न पगारु न बजारु बच्यो,
हाथी हथसार जरे घोरे घोरसारहीं ॥

हाट-बाट हाटकु पिघिलि चलो घी-सो घनो,
कनक-कराही लंक तलफति तायसों ।
नाना पकवान जातुधान बलवान सब
पागि पागि ढेरी कीन्ही भलि भाँति भायसों ॥
पाहुने कृसानु पवमानसों परोसो, हनु-
मान सनमानि कै जेंवाए चित-चायसों ।
'तुलसी' निहारि अरिनारि दै-दै गारि कहैं
'बावरें सुरारि बैरु कीन्हे रामरायसों' ॥

रावनु सो राजरोगु बाढ़त बिराट-उर,
दिनु-दिनु बिकल, सकल सुख राँक सो ।
नाना उपचार करि हारे सुर, सिद्ध, मुनि,
होत न बिसोक, औत पावै न मनाक सो ॥
रामकी रसाइनें रसाइनी समीरसूनु
उतरि पयोधि पार सोधि सरबाक सों ।
जातुधान-बुट पुटपाक लंक-जातरूप-
रतन जतन जारि कियो है मृगांक-सो ॥

सीताजीसे बिदाई

जारि-बारि, कै बिधूम बारिधि बुताइ लूम,
नाइ माथो पगनि, भो ठाढ़ो कर जोरि कै ।
मातु ! कृपा कीजै, सहिदानि दीजै, सुनि सीय
दीन्ही है असीस चारु चूडामनि छोरि कै ।।
कहा कहौं तात ! देखे जात ज्यों बिहात दिन,
बड़ी अवलम्ब ही, सो चले तुम्ह तोरि कै ।
'तुलसी' सनीर नैन, नेहसो सिथिल बैन,
बिकल बिलोकि कपि कहत निहोरि कै ।।

'दिवस छ-सात जात जानिबे न, मातु ! धरु
धीर, अरि-अंतकी अवधि रहि थोरि कै ।
बारिधि बँधाइ सेतु ऐहैं भानुकुलकेतु
सानुज कुसल कपि कटकु बटोरि कै' ।।
बचल बिनीत कहि, सीताको प्रबोधु करि,
'तुलसी' त्रिकूट चढ़ि कहत डफोरि कै ।
'जै जै जानकीस दससीस-करि-केसरी'
कपीसु कूद्यो बात-घात उदधि हलोरि कै ।।

साहसी समीरसूनु नीरनिधि लंघि, लखि
लंक सिद्धपीठु निसि जागो है मसानु सो ।
'तुलसी' बिलोकि महासाहसु प्रसंन भई
देबी सीय-सारिखी, दियो है बरदानु सो ।।
बाटिका उबारि, अछधारि मारि, जारि गढ़,
भानुकुलभानुको प्रतापभानु-भानु-सो ।

करत त्रिसोक लोक-कोकनद, कोक कपि,
कहै जामवंतु, आयो, आयो हनुमानु सो ॥

गगन निहारि, किलकारी भारी सुनि, हनु-
मान पहिचानि भए सानँद सचेत हैं ।
बूड़त जहाज बच्यो पथिकसमाजु, मानो
आजु जाए जानि सब अकमाल देत हैं ॥
'जै जै जानकीस, जै जै लखन-कपीस' कहि,
कूदैं कपि कौतुकी नटत रेत-रेत हैं ।
अंगदु मयंदु नलु नीलु बलसील महा
बालधी फिरावैं मुख नाना गति लेत हैं ॥

आयो हनुमानु प्रानहेतु, अंकमाल देत,
लेत पगधूरि एक, चूमत लँगूल हैं ।
एक बूझैं बार-बार सीय-समाचार, कहें
पवनकुमारु, भो बिगत-स्रम-सूल है ॥
एक भूखे जानि, आगें आनैं कंद-मूल-फल,
एक पूजैं बाहु बलमूल तोरि फूल हैं ।
एक कहैं 'तुलसी' सकल सिधि ताकें जाकें
कृपा-पाथनाथ सीतानाथु सानुकूल हैं ॥

सीयको सनेहु, सीलु, कथा तथा लंकाकी
कहत चले चायसों, सिरानो पथु छनमें ।
कह्यो जुबराज बोलि बानरसमाजु आजु
खाहु फल, सुनि पेलि पैठे मधुबनमें ॥

मारे बागवान, ते पुकारत देवान गे,
'उजारे बाग अंगद', देखाए घाय तनमें।
कहै कपिराजु, करि काजु आये कीस, तुल-
सीसकी सपथ, महामोदु मेरे मनमें ।।

नगरु कुबेरको सुमेरुकी बराबरी,
बिरंचि-बुद्धिको बिलासु लंक निरमान भो।
ईसहि चढाइ सीस बीसबाहु बीर तहाँ,
रावनु सो राजा रज-तेजको निधानु भो ।।
'तुलसी' तिलोककी समृद्धि, सौंज, संपदा
सकेलि चाकि राखी रासि जाँगरु जहानु भो।
तीसरें उपास बनबास सिंधु पास सो
समाजु महाराजज को एक दिन दानु भो ।।

[कवितावली से]

बाल-छवि

अवधेस के द्वारें सकारें गई
सुत गोद कै भूपति लै लिकसे ।
अवलोकि हौं सोच बिमोचन को
ठगि-सी रही, जे न ठगे धिक से ।।
तुलसी मन-रंजन रंजित-अंजन
नैन सुखंजन-जातक-से ।
सजनी ससिमें समसील उभै
नवनील सरोरुह-से बिकसे ।।

पग नूपुर औ पहुँची करकंजनि
मंजु बनी मनिमाल हिएँ ।
नवनील कलेवर पीत झँगा
झलकैं पुलकैं नृपु गोद लिएँ ।।
अरबिंदु-सो आननु रूप मरंदु
अनंदित लोचन भृंग पिएँ ।
मनमो न बस्यो अस बालकु जौं
तुलसी जगमें फलु कौन जिएँ ।।

तनकी दुति स्याम सरोरूह
लोचन कंजकी मंजुलताई हरैं ॥
अति सुन्दर सोहत धूरि भरे
छबि भूरि अनंगकी दूरि धरैं ॥
दमकैं दँतियाँ दुति दामिनि ज्यौं
किलकैं कल बालविनोद करैं ।
अवधेस के बालक चारि सदा
तुलसी-मन-मंदिर में बिहरैं ॥

बाललीला

कबहूँ ससि मागत आरि करैं
कबहूँ प्रतिबिंब निहारि डरैं ।
कबहूँ करताल बजाइकै नाचत
मातु सबै मन मोद भरैं ॥
कबहूँ रिसि आइ कहैं हठिकै
पुनि लेत सोई जेहि लागि अरैं ।
अवधेस के बालक चारि सदा
तुलसी मन-मंदिरमें बिहरैं ॥

वर दंतकी पंगति कुंदकली
अधराधरपल्लव खोलनकी ।
चपला चमकैं धन-बीच जगैं
छबि मोतिन माल अमोलनकी ॥
घुंघुरारि लटैं लटकैं मुख ऊपर
कुंडल लोल कपोलनकी ।
नेवछावरि प्रान करै तुलसी
बलि जाउँ लला इन बोलनकी ॥

पदकंजनि मंजु बनीं पनहीं
धनुही सर पंकज-पानि लिएँ ।
लरिका सँग खेलत डोलत हैं
सरजूतट चौहट हाट हिएँ ॥
तुलसी अस बालक सों नहि नेहु
कहा जप जोग समाधि किएँ ।
नर वे खर सूकर स्वान समान
कहौ जगमें फलु कौन जिएँ ॥

सरजू बर तीरहिं तीर फिरै
रघुबीर सखा अरु बीर सबै ।
धनुहीं कर तीर, निषंग कसें
कटि पीत दुकूल नवीन फबै ॥
तुलसी तेहि औसर लावनिता
दस चारि नौ तीन इकीस सबै ।
मति भारति पंगु भई जो निहारि
बिचारि फिरी उपमा न पबै ॥

[कवितावली से]

विनय

गाइये गनपति जगवंदन
संकर-सुवन भवानी-नंदन ।।
सिद्धि-सदन, गज-वदन, विनायक
कृपा-सिंधु, सुंदर, सब लायक ।।
मोदक-प्रिय, मुद-मंगल-दाता
विद्या-वारिधि, बुद्धि-विधाता ।।
मांगत तुलसिदास कर जोरे
बसहिं राम सिय मानस मोरे ।।

को जाँचिये संभु तजि आन ।
दीनदयालु भगत आरति-हर, सब प्रकार समरथ भगवान ।।
कालकूट-जुर जरत सुरासुर, निज पन लागि किये विषपान ।
दारुन दनुज, जगत-दुखदायक, मारेउ त्रिपुर एक ही बान ।।
जो गति अगम महामुनि दुर्लभ, कहत संत, धुनि सकल पुरान ।
सो गति मरन-काल अपने पुर, देत सदासिव सबहिं समान ।।
सेवत सुलभ उदार कलपतरु, पारबती-पति परम सुजान ।
देहु काम-रिपु राम-चरन-रति, तुलसिदास कहँ कृपानिधान ।।

मेरो भलो कियो राम आपनी भलाई।
हौं तो साईं-द्रोही पै सेवक-हित-साईं ॥
रामसों बड़ो है कौन, मोसों कौन छोटो।
रामसों खरो है कौन मोसों कौन खोटो ॥
लोक कहै रामको गुलाम हौं कहावौं।
एतो बड़ो अपराध भौ न मन बावौं ॥
पाथ माथे चढ़े तृन तुलसी ज्यों नीचो।
बोरत न बारि ताहि जानि आपु सींचो ॥

जागु, जागु जीव जड़! जोहै जग-जामिनी।
देह-गेह-नेह जानि जैसे घन-दामिनी ॥
सोवत सपनेहुँ सहै संसृति-संताप रे।
बूड्यो मृग-बारि खायो जेबरीको साँप रे ॥
कहैं बेद-बुध, तू तो बूझि मनमाहिं रे।
दोष-दुख सपनेके जागे ही पै जाहिं रे ॥
तुलसी जागेते जाय ताप तिहूं ताय रे।
राम-नाम सुचि रुचि सहज सुभाय रे ॥

रामको गुलाम, नाम रामबोला राख्यो राम,
काम यहै, नाम द्वै हौं कबहूं कहत हौं।
रोटी-लूगा नीके राखै, आगेहू की बेद भाखै,
भलो ह्वै है तेरो, ताते आनंद लहत हौं ॥
बाँध्यौ हौं करम जड़ गरब गूढ़ निगड़
सुनत दुसह हौं तो साँसति सहत हौं।
आरत-अनाथ-नाथ, कौसलपाल कृपाल,
लीन्हों छीन दीन देख्यो, दुरित दहत हौं ॥

बूझ्यो ज्यौं ही, कह्यो, मैं हूं चेरो ह्वैहौं रावरो जू
मेरो कोऊ कहूं नाहिं चरन गहत हौं ।
मींजो गुरु पीठ, अपनाइ गहि बाँह बोलि
सेवक-सुखद, सदा बिरद बहत हौं ।।
लोग कहैं पोच, सो न सोच न सँकोच मेरे
ब्याह न बरेखी, जाति-पाँति न चहत हौं ।
तुलसी अकाज-काज राम ही के रीझे खीझे,
प्रीतिकी प्रतीति मन मुदित रहत हौं ।।

देव—

तू दयालु, दीन हौं, तू दानि, हौं भिखारी ।
हौं प्रसिद्ध पातकी, तू पाप-पुंज-हारी ।।
नाथ तू अनाथको, अनाथ कौन मोसों ।
मो समान आरत नहिं आरतिहर तोसो ।।
ब्रह्म तू, हौं जीव, तू है ठाकुर, हौं चेरो ।
तात-मातु, गुरु-सखा तू सब विधि हितु मेरो ।।
तोहि मोहि नाते अनेक, मानियै जो भावै ।
ज्यों त्यों तुलसी कृपालु ! चरन-सरन पावै ।।

ऐसी मूढ़ता या मन की ।
परिहरि राम-भगति-सुर-सरिता, आस करत ओसकनकी ।।
धूम-समूह निरखि चातक ज्यों, तृषित जानि मति धनकी ।
नहिं तहँ सीतलता न बारि, पुनि हानि होति लोचनकी ।।

ज्यों गज-काँच बिलोकि सेन जड़ छाँह आपने तनकी ।
टूटत अति आतुर अहार बस, छति बिसारि आननकी ॥
कहँ लौं कहौं कुचाल कृपानिधि ! जानत हौ गति जनकी ।
तुलसिदास प्रभु हरहु दुसह दुख, करहु लाज निज पनकी ॥

अबलौं नसानी, अब न नसैहौं ।
राम-कृपा भव-निसा सिरानी, जागे फिरि न डसैहौं ॥
पायेउँ नाम चारु चिंतामनि, उर कर तें न खसैहौं ।
स्यामरूप सुचि रुचिर कसौटी, चित-कंचनहिं कसैहौं ॥
परबस जानि हँस्यो इन इंद्रिन, निज बस ह्वै न हँसैहौं ।
मन-मधुकर पनकै तुलसी रघुपति-पद-कमल बसैहौं ॥

जानत प्रीति-रीति रघुराई ।
नाते सब हाते करि राखत, राम सनेह-सगाई ॥
नेह निबाहि देह तजि दसरथ, कीरति अचल चलाई ।
ऐसेहु पितु तें अधिक गीध पर ममता गुन गरु आई ॥
तिय-बिरही सुग्रीव-सखा लखि प्रानप्रिया बिसराई ।
रन पट्यो बंधु बिभीषन ही को, सोच हृदय अधिकाई ॥
घर गुरुगृह प्रिय सदन सासुरे, भइ जब जहँ पहुनाई ।
तब तहँ कहिं सबरीके फलनिको रुचि माधुरी न पाई ॥
सहज सरूप कथा मुनि बरनत रहत सकुचि सिर नाई ।
केवट मीत कहे सुख मानत वानर बंधु बड़ाई ॥
प्रेम कनौड़ो रामसो प्रभु त्रिभुवन तिहुं काल न भाई ।
तेरो रिनी हौं कह्यो कपि सों ऐसी मानिहि को सेवकाई ॥

तुलसी राम-सनेह-सील लखि, जो न भगति उर आई ।
तौ तोहिं जनमि जाय जननी जड़ तनु-तरुनता गँवाई ।।

जाके प्रिय न राम-बैदेही ।
तजिये ताहि कोटि बैरी सम, जद्यपि परम सनेही ।।
तज्यो पिता प्रह्लाद, बिभीषन बंधु, भरत महतारी ।
बलि गुरु तज्यो कंत ब्रज-बनितन्हि, भये मुद-मंगलकारी ।।
नाते नेह रामके मनियत सुहृद सुसेव्य जहाँ लौं ।
अंजन कहा आँखि जेहि फूटै, बहुतक कहौं कहाँ लौं ।।
तुलसी सो सब भाँति परम हित पूज्य प्रानते प्यारो ।
जासों होय सनेह राम-पद, एतो मतो हमारो ।।

[विनय-पत्रिका से]

कठिन शब्दार्थ

धनुष यज्ञ

पृष्ठ

१ बंदी—भाट, चारण। सुनहु—सुनिए। महिपाल—राजा। पन—प्रण, प्रतिज्ञा। बिदेह कर—महाराजा जनक का। बिधु—चन्द्र। गरुअ—भारी। बानु—बाणासुर। महाभट भारे—भारी योद्धा। गवँहि सिधारे—चुपके-से चलते बने। पुरारि कोदंडु—शिव-धनुष। जोइ तोरा—जो भी तोडेगा। बरइ हठि तेही—उसको हठपूर्वक वरण करेगी। भूप अभिलाषे—राजा ललचा उठे। भटमानी—वीरता के अभिमानी। मन माखे—मन में बहुत ही क्रुद्ध हुए। परिकरि बाँधि—कमर कसकर। सिर नाई—सिर नवाकर। तमकि...धरहीं—वे तमककर (बड़े ताव से) शिवजी के धनुष की ओर देखते हैं और फिर निगाह जमाकर उसे पकड़ते हैं। बिचारु—विवेक। गरुआइ—भारी होता जाता है। सहस दस—दस हज़ार। टरइ न टारा—टाले नहीं टलता। डगइ न—नहीं डिगता। सती मनु—सती का मन। भए जोगु उपहासी—उपहास के योग्य हो गये। चाप कर—धनुष के हाथों। जनु—मानो। रोष साने—क्रोध में सने हुए।

२ दीप—द्वीप। पनु ठाना—प्रण किया था, प्रतिज्ञा की थी। कुअँरि ......दमनीय—धनुष को तोड़कर मनोहर कन्या, बड़ी विजय और अत्यन्त सुन्दर कीर्ति को पानेवाला मानो ब्रह्मा ने किसी को रचा ही नहीं। काहुँ—किसीने। रहउ......छडाई—अरे भाई! चढ़ाना और

तोड़ना तो दूर रहा, कोई तिलभर भूमि भी छुड़ा न सका। जनि कोउ माखै—कोई नाराज़ न हो। जौं......हँसाई—यदि मैं जानता कि पृथ्वी वीरों से शून्य है तो प्रण करके उपहास का पात्र नहीं बनता। माखे—तमतमा उठे, क्रुद्ध हो उठे। रदपट......रिसौंहें—ओठ फड़कने लगे और नेत्र क्रोध से लाल हो गये। गिरा प्रमान—यथार्थ वचन। रघुकुल मनि—श्रीरामजी। भानुकुल पंकज भानू—हे, सूर्यकुलरूपी कमल के सूर्य! (श्रीरामजी)। कहउँ सुभाउ—स्वभाव से ही कहता हूँ। कंदुक इव—गेंद की तरह। मूलक जिमि—मूली की तरह। बापुरो—बेचारा। जोजन सत प्रमान लै धावौं---सौ योजन तक दौड़ा लिये चला जाऊँ।

पृष्ठ छत्रक दंड जिमि—कुकुरमुत्ते की तरह। भाथ—तरकस।
३ पुलकाहीं—पुलकित होने लगे। सयनहिं—इशारे से।. नेवारे—मना किया। मेटहु—मिटाओ। ठाढे भए......लजाएँ—(श्रीरामजी) अपनी ऐंड (खड़े होने की शान) से जवान सिंह को भी लजाते हुए सहज स्वभाव से ही उठ खड़े हुए। बालपतंग—बालसूर्य। नृपन्ह ......नासी—राजाओं की आशारूपी रात्रि नष्ट हो गयी। उलूक—उल्लू। लुकाने—छिप गये। जनावहिं—प्रकट कर रहे हैं। आयसु—आज्ञा। कुंजर—हाथी। सुकृत संभारे—अपने पुण्यों का स्मरण किया।

४ असि—ऐसा। दापा—दर्द, घमंड। सयानप सिरानी—सयानापन समाप्त हो गया। लघु गनिअ न—छोटा नहीं गिनना चाहिए। कुंभज घड़े से उत्पन्न होनेवाले मुनि अगस्त्य। सोषेउ—सोख लिया। खर्ब—छोटा। भै परतीति—विश्वास हो गया। बिनवति जेहि तेही—जिस-तिस (देवता) से विनती कर रही हैं। मनाव—मना रही हैं। गरुआई—भारीपन। आज लगें—आज ही केलिए।

पृष्ठ कुलिसहु चाहि—वज्र से भी बढ़कर। सिरस......हीरा—सिरस
५ के फूल के कण से कहीं हीरा छेदा जाता है। गति तोरी—तुम्हारा ही आसरा है। होहि हरुअ—हल्के हो जाओ। लव......जाहीं—निमेष का एक लव (अंश) भी सौ युगों के समान बीत रहा है। खेलत......डोल—मानो चन्द्रमण्डलरूपी डोल में कामदेव की दो मछलियाँ खेल रही हों। गिरा......रोकी—सीताजी की वाणीरूपी भ्रमरी को उनके मुखरूपी कमल ने रोक रखा है। राचा—अनुरक्त। प्रभु......ठाना—प्रभु की ओर देखकर सीताजी ने शरीर के द्वारा प्रेम ठान लिया अर्थात् यह निश्चय कर लिया कि यह शरीर इन्हींका होकर रहेगा या रहेगा ही नहीं। गरुरु—गरुड़। ताकेउ—देखा। हर कोदंडु—शिवाजी का धनुष। चापि—दबाकर। दिसिकुंजर—दिग्गज। कमठ—कच्छप। अहि—सर्प, शेष। कोला—वराह।

६ भृगुपति......गरु आई—परशुरामजी के गर्व की गुरुता। कदराई—कातरता। बोहितु—जहाज। संगु बनाई—समाज बनाकर। चहत पारु—पार जाना चाहते हैं। कड़हारू—केवट। चितई—देखा। कृपायतन—कृपाधाम, श्रीरामजी। निमिष......तेही—उनका एक-एक क्षण कल्प के समान बीत रहा था। मुएँ—मर जाने पर। करइ का—क्या करेगा। सुधा तड़ागा—अमृत का तालाब। चुकें—बीत जाने पर। दमकेउ......लयऊ—जब लिया, तब वह बिजली की तरह चमका। रवि बाजि—सूर्य के घोड़े। चिक्करहिं......कलमले—दिग्गज चिग्घाड़ने लगे, धरती डोलने लगी, शेष, वराह और कच्छप कलमला उठे। कर कान दीन्हें—कानों पर हाथ रखकर। बूड़—डूबा। कौसिकरूप......सुहावन—विश्वामित्ररूपी पवित्र समुद्र में, जिसमें प्रेमरूपी सुन्दर अथाह जल भरा है।

पृष्ठ रामरूप......भारी—रामरूपी पूर्णचन्द्र को देखकर पुलकावलीरूपी
७ भारी लहरें बढ़ने लगीं। निसाना—नगाडा। हय—घोड़ा। गय —गज, हाथी। चीर—वस्त्र। दुन्दुभी—नगाड़ा। पैरत.....पाई —मानो तैरते-तैरते थके हुए पुरुष ने थाह पा ली हो। गवनी—चली। चित्र अवरेखी—चित्र में लिखी-सी।

८ पहिरावहु—पहनाओ। सोहत.....जयमाला—उस समय उनके हाथ ऐसे सुशोभित हो रहे हैं मानो डंडियों सहित दो कमल चन्द्रमा को डरते हुए जयमाला दे रहे हों। भुआल—भूपाल, राजा। देहिं..... बिसारी—अपनी पूंजी (हैसियत) को भुलाकर (सामर्थ्य से बहुत अधिक) निछावर कर रहे हैं। सोहति.....ठोरी—श्रीसीता-रामजी की जोड़ी ऐसी सुशोभित हो रही है मानो सुन्दरता और श्रृंगार-रस एकत्र हो गये हैं। गौतम.....पानि—गौतमजी की स्त्री अहल्या की गति का स्मरण करके सीताजी श्रीरामजी के चरणों को हाथों से स्पर्श नहीं कर रही हैं। कूर—दुष्ट। कपूत—कुपूत। पहिरि सनाह—कवच पहनकर। गाल बजावन लागे—व्यर्थ बकवाद करने लगे। लेहु.....कोऊ—कोई कहते हैं, सीता को छीन लो। चाड़ नहिं सरई —चाह नहीं सरेगी (पूरी नहीं होगी)। जीवत हमहि—हमारे जीते-जी। को बरई—कौन ब्याह कर सकता है? राजसमाजहिलाज लजानी—राजसमाज को देखकर तो लाज भी लजा गयी।

९ नाक—प्रतिष्ठा। सिधाई—चली गयी। असि.....लाई—ऐसी दुष्ट बुद्धि है, तभी तो विधाता ने तुम्हारे मुखों पर कालिख लगा दी। कोहु—क्रोध। सलभ जनि होहु—पतंगे मत बनो। बैनतेय.....भागू —जैसे गरुड़ का भाग कौवा चाहे, सिंह का भाग खरगोश चाहे। नरनाहा—राजा। सकानी—शंकित हो गयी। अब धौं.....करनीया

—न जाने विधाता अब क्या करनेवाले हैं। चोप—जोश। खरभरु —खलबली। भृगुकुल कमल पतंग—भृगुकुलरूपी कमल के सूर्य परशुरामजी। बाज.....लुकाने—मानो बाज के झपटने पर बटेर छिप गये हों। गौरि.....भ्राजा—गोरे शरीर पर विभूति (भस्म) शोभा पा रही है। रिस राते—क्रोध से लाल। सहजहुँ चितवत—सहज ही देखते हैं। तून—तूणीर, तरकस। कल—काँधे—सुन्दर कंधे पर।

पृष्ठ आइ खुटानी—आयु पूरी हो गयी। ढोटा—पुत्र। जोटा—
१० जोड़ी। रूप.....मोचन—कामदेव के भी मद को छुडानेवाला अपार सौन्दर्य। कै तोरा—किसने तोड़ा। जहँ लगि तव राजू—जहाँ तक तेरा राज्य है।

११ केउ—कोई। आयसु.....मोही—क्या आज्ञा है, मुझसे क्यों नहीं कहते? सहसबाहु—सहस्रबाहु, कार्तवीर्य। सो.....राजा—वह इस समाज को छोड़कर अलग हो जाय, नहीं तो सभी राजा मारे जायँगे। लरिकाईं—लड़कपन में। भृगुकुलकेतू—भृगुवंश को ध्वजास्वरूप परशुरामजी। बोलत.....संभार—तुझे बोलने में कुछ भी होश नहीं है। तिपुरारि—शिवजी। हमरें जाना—हमारे जानने में। जून—पुराना। देखा.....भोरें—श्रीरामचन्द्रजी ने तो इसे नवीन के धोखे से देखा था। करिअ कत रोसू—किसलिए क्रोध करते हैं। महिदेवन्ह—ब्राह्मणों को। जनि सोचबस करसि—सोच के वश न कर। गर्भन्ह.....दलन—गर्भों के बच्चों का भी नाश करनेवाला है। चहत .....पहारू—फूँक से पहाड़ उड़ाना चाहते हैं।

१२ कुम्हड़बतिया—कुम्हड़े की बतिया (छोटा कच्चा फल)। हमरें..... सुराई—इन पर हमारे कुल में वीरता नहीं दिखायी जाती। भारत

.....तुम्हारें—आप मारें तो भी आपके पैर ही पड़ना चाहिए। छमहु —क्षमा कीजिए। घालकु—घातक। भानु ...कलंकू—यह सूर्यवंश-रूपी पूर्णचन्द्र का कलंक है। निपट—बिल्कुल। निरंकुस—उद्दण्ड। अबुध—मूर्ख। असंकू—निडर। काल कवलु—काल का ग्रास, मौत का शिकार। खोरि—दोष। तुम्ह....हमारा—यदि तुम इसे बचाना चाहते हो, तो हमारा प्रताप, बल और क्रोध बतलाकर इसे मना कर दो। तुम्हहि पारा--आपके रहते दूसरा कौन वर्णन कर सकता है। तुम्ह बोलावा--आप तो मानो काल को हाँक लगाकर बार-बार उसे मेरेलिए बुलाते हैं। मरनिहार भा साँचा--सचमुच मरने को ही आ गया है।

पृष्ठ न त....थोरें--नहीं तो इसे इस कठोर कुठार से काटकर थोड़े
१३ ही परिश्रम से गुरु से उऋण हो जाता। मुनिहि...अबूझ--मुनि को हार-ही-हरा सूझ रहा है, अर्थात् सर्वत्र विजयी होने के कारण ये श्रीराम-लक्ष्मण को भी साधारण क्षत्रिय ही समझ रहे हैं। किन्तु यह लोहमयी (केवल फौलाद की बनी हुई) खाँड (खाँडा–खड्ग) है, ऊख की (रस की) खाँड नहीं है। मुनि अब भी बेसमझ बने हुए हैं; इन की शक्ति और प्रताप को नहीं समझ रहे हैं। अब .. बोलि —अब किसी हिसाब करनेवाले को बुला लाइए। बचउँ--बचा रहा हूँ। घरहि के बाढ़े--घर ही में बडे हैं। कृसानु--आग। छोहू—कृपा। सुध—सीधा। अयाना--बेसमझ। अचगरि--चपलता। कछुक जुड़ाने--कुछ ठंडे पड़े।

१४ कालकूटमुख--विषमुख। पयमुख---दुधमुँहा। सहज ...मोही--स्वभाव से ही टेढा है, तेरा अनुसरण नहीं करता (तेरे-जैसा शीलवान नहीं है)। यह नीच मुझे काल के समान नहीं देखता। टूट.... पिराने—टूटा हुआ धनुष क्रोध करने से जुड़ नहीं जायगा। खड़े-खड़े

पैर दुखने लगे होंगे, बैठ जाइये। मष्ट करहु--चुप रहिये। जरइ --जल रहा है। देइ निहोरा--एहसान जनाकर। कनक घटु-- सोने का घड़ा। बिदूषहिं काऊ--कभी दोष नहीं लगाते। अजहुँ ... अनैसें—अब भी तेरा छोटा भाई टेढा ही ताक रहा है।

पृष्ठ गर्भ....खनि—राजाओं की स्त्रियों के गर्भ गिर पड़ते हैं। परसु
१५ अछत—फरसे के रहते। बहइ न हाथ—हाथ चलता नहीं। मोरे ....काउ मेरे हृदय में किसी समय भी कृपा कैसी? बाउ अनुकूला आपकी कृपारूपी वायु भी आपकी मूर्ति के अनुकूल ही है। कीन्ह ... गेहू यह मूर्ख बालक हठ करके यमपुरी में घर करना (रहना) चाहता है। मूदें नाहीं आँख मूँद लेने पर कहीं कोई नहीं है। छाड़ ..रामा—राम कहलाना छोड़ दे। गुनह लखन कर—गुनाह (दोष) तो लक्ष्मण का। कतहुँ....दोबू कहीं-कहीं सीधेपन में भी बड़ा दोष होता है। बक्र —टेढा। समरु कस—युद्ध कैसा।

१६ भै....बिचारी वीर समझकर बालक को क्रोध आ गया। औतेहु —आते तो। सरिबरि -बराबरी। नव गुन—नौ गुणः शम, दम, तप, शौच, क्षमा, सरलता, ज्ञान, विज्ञान ओर आस्तिकता। तहूँ—तू भी। चाप ..कीन्हे—धनुष को स्रुवा (काठ की छोटी करछी जिससे हवन आदि में घी की आहुति देते हैं), बाण को आहुति ओर मेरे क्रोध को अत्यन्त भयंकर अग्नि जान। चतुरंगिणी सेना सुन्दर समिधाएँ (यज्ञ में जलायी जानेवाली लकड़ियाँ) हैं। बड़े-बड़े राजा उसमें आकर बलि के पशु हुए हैं, जिनको मैंने इसी फरसे से काटकर बलि दिया है। ऐसे करोड़ों जपयुक्त रण-यज्ञ मैंने किये हैं। विप्र के भोरें—धोखे से ब्राह्मण समझकर। दापु—घमंड। अहमिति—अहंकार। मनहुँ....ठाढ़ा—मानो संसार को जीतकर खड़ा है।

सुभटु –योद्धा । जेहि....माथ—जिसे हम डरके मारे मस्तक नवायें। पचारै—ललकारे । लरहिं होऊ—हम उससे सुखपूर्वक लड़ेंगे चाहे काल ही क्यों न हो ।

पृष्ट सकाना –डर गया । पाँवर—नीच । अभय....डेराई जो
१७ आपसे डरता है वह सबसे निर्भय हो जाता है (अथवा जो भयरहित होता है वह भी आपसे डरता है ।)। उघरे मति के—परशुरामजी की बुद्धि के परदे खुल गये । न अमात - समाता न था । कृसानु – अग्नि । नागर—चतुर । अग्याता—अनजान में । गवँहि पराने—भाग गये ।

वन-गमन

१८ जन चढ़ि—(रथ पर) सवार हुए । सचिवँ—मंत्री, सुमंत्रजी । खोज दुराइ –खोज छिपाकर। गे—गये । सोरू--शोर। सराहहिं मीना—मछलियों की सराहना करते हैं । धिग जीवनु—जीवन को धिक्कार है । जौं ...दीन्हा—विधाता ने यदि प्यारे का वियोग ही रचा, तो फिर उसने माँगने पर मृत्यु क्यों नहीं दी? तमारि—सूर्य। देवसरि गंगा। सूला—पीड़ा ।

१९ सुमिरत ...व्यवहारू –जिनके स्मरणमात्र से (बार-बार जन्मने और मरने का) महान श्रम मिट जाता है, उनको 'श्रम' होना—यह केवल लौकिक व्यवहार (नरलीला) है। संसृति सागर सेतु संसाररूपी समुद्र के पार उतरने केलिए पुल के समान हैं। सुधि—खबर । भरि भारा - बहँगियों में भरकर। भयउँ लेखें—मैं भाग्यवान पुरुषों की गिनती में आ गया । धारिअ पाऊ - पधारिये । थापिअ .. सिहाऊ—इस दास की प्रतिष्ठा बढ़ाइए जिससे सब लोग

मेरे भाग्य की बड़ाई करें। आना —अन्य, और ही। पठए—भेजा। लोयन लाहु नेत्रों का लाभ। तरु सिसुपा अशोक का पेड़। ठाउँ —स्थान। जोहारु—वन्दना। डसाई—बिछा दी। कुस किसलयमय —कुश और कोमल पत्तों की। सुचि -पवित्र। राखेसि—रख दिया।

पृष्ठ २० पाय पलोटत -पैर दबाने लगे। कहि सचिवहि सोवन—मंत्री सुमंत्रजी को सोने केलिए कहकर। पाहरू प्रतीति -विश्वास-पात्र पहरेदार। ठाँव-ठाँव —जगह-जगह। भाथी—तरकस। सुरपति ....पावा—इन्द्रभवन भी जिसकी समानता नहीं पा सकता। चौबारे छत के ऊपर के बँगले। रतिपति -कामदेव। सुपास पूरा आराम, सुख-सुविधाएँ। तुराई—गद्दे। छीर फेन —दूध का फेन। श्रमित—थके हुए। जाहिं न जोए—देखे नहीं जाते। जोगवहिं—(जिनकी) सार-संभार करते थे। महि सोवत—पृथ्वी पर सो रहे हैं। सुरेस सखा इन्द्र का मित्र। विधि....केहि विधाता किस को प्रतिकूल नहीं होता। करम—कर्म (भाग्य)।

२१ भइ कुठारी—सूर्यकुलरूपी वृक्ष केलिए कुल्हाड़ी हो गयी। काहु ...दाता—कोई किसीको सुख-दुःख का देनेवाला नहीं है। जहँ जालू—जहाँ तक जगत के जंजाल हैं। जियँ जोइ—हृदय से देखना चाहिए। काहुहि—किसीको। बादि—व्यर्थ। मोह सोवनिहारा —सब लोग मोहरूपी रात्रि में सोनेवाले हैं। एहू यही। क्रम कर्म। नेहू—स्नेह। अबिगत—जानने में न आनेवाले। अलख—स्थूल दृष्टि से देखने में न आनेवाले। अनूपा अनुपम। गतभेदा —भेदशून्य। कहि बेदा वेद जिनका नित्य 'नेति-नेति' (ऐसा नहीं, ऐसा नहीं) कहकर निरूपण करते हैं। सुरभि—गौ। भा भिनुसारा सबेरा हो गया।

पृष्ठ बट छीर—बड़ का दूध। अन्हवाई—स्नान कराकर। आनेहु
२२ फेरी—फिरा लाना। निबेरी—दूर करके। जस... सोइ—जैसा कहें, मैं वही करू; मैं आपकी बलिहारी हूँ। पायन्ह परेउ—चरणों में गिर पड़े। धर्म ...सोधा—आपने तो धर्म के सभी सिद्धान्तों को छान डाला है। धरमु धरेउ—धर्म को पकड़े रहे। सुलभ करि पावा—सहज ही पा लिया है। तजें ..छावा—इसका (सत्यरूपी धर्म का) त्याग करने से तीनों लोकों में अपयश छा जायगा। संभावित कहुँ प्रतिष्ठित पुरुष केलिए। कवनिहु बात कै किसी बात की। बरजे—मना किया।

२३ निज सपथ देवाइ—अपनी सौगन्ध दिलाकर। जब बिहान—जब तक यह विपत्ति दूर नहीं होती। खभारू—चिन्ता। तनु.... छेंकी शरीर को छोड़कर छाया अलग कैसे रोकी रह सकती है। बिलगु न मानब—बुरा न मानियेगा। आरजसुत नात आर्यपुत्र के चरणकमलों के बिना जगत् में जहाँ तक नाते हैं सभी मेरेलिए व्यर्थ हैं। डीठा-देखा है। नृप..पीठा जिनके चरण रखने की चौकी से बड़े-बड़े राजाओं के मुकुट मिलते हैं (चरणों में प्रणाम करते हैं)। चक्कवइ—चक्रवर्ती सम्राट। आगे लेई—इन्द्र भी आगे होकर जिनका स्वागत करता है।

२४ एतादृस—ऐसे। केउ—कोई भी। केहरी—सिंह। कुरंगा—हिरन। मोहि हुँति—मेरे लिए। करबि—कीजिएगा। परि पायँ—पांव पड़कर। वीर धुरीन—वीरों में अग्रगन्य। मगु श्रमु—रास्ते की थकावट। भोरें—भूलकर भी। सीतलि—शीतल। जनु फनि मनि हानी—जैसे साँप मणि खो जाने पर। कुछ न बसाई—उसपर कुछ भी वश नहीं चलता। फिरेउ.....गँवाई—जैसे कोई व्यापारी

अपना मूलधन गँवाकर लौटा। हेरि हेरि—देख-देखकर। जिइहहिं कैसें—कैसे जीते रहेंगे। बरबस—जबरदस्ती। मरमु—भेद, रहस्य। मानुष.....अहई—मनुष्य बना देनेवाली कोई जड़ी है। छुअत—छूते ही। काठ—लकड़ी। तरनि—नाव। मुनि घरनी—मुनि की पत्नी, अहल्या। बाट.....उड़ाई—रास्ता रुक जायेगा (१. आप पार न हो सकेंगे; २. मेरी कमाने--खाने की राह मारी जायेगी।); मेरी नाव नष्ट होगी।

पृष्ठ २५ एहिं—इसी से। अउर कबारू—दूसरा कोई धन्धा। जौं.....कहहू—हे प्रभु! यदि तुम अवश्य ही पार जाना चाहते हो तो मुझे पहले अपने चरण-कमल पखारने केलिए कह दो। राउरि आन—आपकी दुहाई। पै—पर। करुनाऐन—करुणाधाम। जेहिं.....थोरा—जिन्होंने जगत को तीन पग से भी छोटा कर दिया था। देवसरि—गंगा। मोहँमति करषी—मोह नष्ट हो गया। रजायसु—आज्ञा। सिहाहीं—ईर्ष्याभरी दृष्टि से देखने लगे; मुग्ध हो गये। पितर..... पार—पहले अपने पितरों को भवसागर से पार कर फिर आनन्दपूर्वक प्रभु श्रीरामचन्द्रजी को गंगाजी के पार ले गया। ठाढ़ भए—खड़े हो गये। रेता—बालू में। मनि मुदरी—रत्नजटित अंगूठी।

२६ आजु.....भूरी—विधाता ने आज बहुत अच्छी भरपूर मज़दूरी दे दी। पारथिव—मिट्टी का शिवलिंग। पुरउबि—पूरा कीजिएगा। जेहिं—जिससे। तेहि.....जोरें—सब सिद्धियाँ हाथ जोड़कर तुम्हारी सेवा करती हैं। देबि असीसा—आशीर्वाद दूँगी। बागीसा—वाणी। सूख.....दाहू—मुँह सूख गया और हृदय में दाह उत्पन्न हो गया। जसि देब रजाई—आप जैसी आज्ञा देंगे।

पृष्ठ २७ संग लीन्ह—साथ ले लिया। हृदयँ हुलासू—हृदय में बड़ा आनन्द हुआ। ग्याति—अपनी जाति के लोगों को। विटप तर—वृक्ष के नीचे। सुपासू—सुविधा, सुव्यवस्था। प्रातकृत करि—प्रातःकाल की सब क्रियाएँ करके। तीरथराजु—तीर्थों का राजा प्रयाग। माधव—श्रीवेणीमाधवजी। चारि पदारथ—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। सपनेहुँ.....पावा—स्वप्न में भी (पापरूपी) शत्रु नहीं पा सके हैं। कलुष अनीक—पाप की सेना। सुठि सोहा—अत्यन्त सुन्दर। अखयबटु—अक्षयवट। कलुष.....मृगराऊ—पापों के समूहरूपी हाथी के मारने केलिए सिंहरूप।

२८ आनि—लाकर। परिपूरन कीन्हे—संतुष्ट कर दिया। अवधि—सीमा। जनु—दास। उपचार—उपाय। अघाने—तृप्त हुए। बटु—ब्रह्मचारी। सुअन—सुत, पुत्र। सब काहू—सब किसी को। लहि लोयन लाहू—नेत्रों का लाभ पाकर।

२९ केहि मग जाहीं—किस मार्ग से जायें। साथ लागि—साथ केलिए। दीख हमारा—हमारा देखा हुआ है। जिन्ह.....कीन्हे—जिन्होंने बहुत जन्मों तक सब सुकृत किये थे। फिरहिं.....पठाई—मन नाथ के साथ भेजकर दुःखी होकर लौटते हैं। पाइ मन काम—मनचाही वस्तु पाकर। नाउँ—नाम। बूझत—पूछते। बयबिरिध—वयोवृद्ध। सयाने—चतुर। जुगुति—युक्ति। लघुबयस—छोटी अवस्था का। कबि.....गति—उसकी गति कवि नहीं जानता अथवा वह कवि था जो अपना परिचय नहीं देना चाहता। परम रंक—महा दरिद्र। पारस स्पर्शमणि, एक कल्पित पत्थर जिसके सम्बध में यह प्रसिद्ध है कि यदि लोहा उससे छू जाय तो सोना हो जाता है। धरें तन—शरीर धारण करके।

पृष्ठ पायन्ह लागा—चरणों लगा। उमगि अनुरागा—प्रेम से उमँगकर।

३० सुअसनु—सुन्दर भोजन। बहोरी—पुनः, फिर से। मग जाता—रास्ते में जाते हुए। पयादेहि पाएँ—पैदल ही चल रहे हो। तेहि महँ—तिसपर। जाब—जायेंगे। फिरब—लौट आएँगे। फेरहिं—लौटा देते हैं। केहि.....बसाए—किस पुण्यवान ने किस शुभ घड़ी में इनको बसाया था। अमरावती—इन्द्र की पुरी।

३१ अवगाहहिं—स्नान करते हैं। मानती.....भागा—भूमि अपना बड़ा सौभाग्य मानति है। निकसहिं जाई—जा निकलते हैं। बीरा—भाइयों को। तिन्ह केरी—उनकी। लहि.....ढेरी—मानो दरिद्र ने चिन्तामणि की ढेरी पा ली हो। छन एहीं—इसी क्षण। गवाँइअ छिनुकु श्रमु—क्षणभर (यहाँ बैठकर) थकावट मिटा दीजिए। गवनब—जाइयेगा। अँचइअ—आचमन कर लीजिये। घरिक—घड़ीभर। मदन—कामदेव।

३२ सुठि नीके—बहुत ही भले। भावते जी के—मन को बहुत भाते हैं। मुनिपट—मुनियों के वस्त्र, वल्कल। सरद.....जाल—शरत्पूर्णिमा के चन्द्र के समान सुन्दर मुखों पर पसीने की बूँदों का समूह शोभित हो रहा है। चित.....लाई—चित्त, मन और बुद्धि लगाकर। थके—थकित रह गये। मृगी मृग—हिरनी और हिरन। तिय सुभायँ—स्त्री स्वभाव के कारण। बिलगु न मानब—बुरा न मानिएगा। इन्ह.....सोने—मरकतमणि और सुवर्ण ने इन्हीं से कान्ति पायी है। सुषमा ऐन—शोभा के धाम। सर्बरीनाथ—चन्द्र। दुहुँ सकोच—दोनों ओर के संकोच से। बरबरनी—उत्तम वर्णवाली, सुन्दरी। पिकबयनी—कोकिल की-सी वाणीवाली। सयननि—इशारे से।

३३ अहि—शेषजी। सीस—सिर। न छाडब छोहू—कृपा न छोड़ना।

कौमुदी–चाँदनी। दैअहि—दैव (भाग्य) को। सरुज—रोगी। रूख—वृक्ष। डासि—डालकर। कत सृजत—किसलिए बनाता है। बादि—व्यर्थ ही।

पृष्ठ ३४ असन—भोजन। आपु प्रगट भए—अपने-आप प्रकट हुए हैं। भुअन दस चारी—चौदहों लोकों में। पटतर जोग—उपमा के योग्य। ऐक न आए—कोई ठीक न हुआ। बन आनि दुराए—वन में लाकर छिपा दिया है। जे.....देखे—जिन्होंने देखा है, जो देख रहे हैं ओर जो देखेंगे। किमि—कैसे। गह्बरि—व्यथित। अरुनारे—लाल। कस.....कीन्हा—रास्ते को पुष्पमय क्यों न बनाया। कर मीज़हिं—हाथ मलते हैं। कैरव—कुमुदिनी।

३५ नरनाहू—नरनाथ, राजा। लोग-लोगाई—स्त्री-पुरुष सभी। बिरंचि—ब्रह्मा। मधु—वसन्त। जियँ जोही—हृदय में खोजकर। बराएँ बचाते हुए। दाहिन लाएँ—दाहिने रखकर। लिए चोरि—चुरा लिये। बटोहीं—पथिक। रहे सिराइ—तै कर लिया।

लंका–दहन

३६ बासव—इन्द्र। बिधि—ब्रह्मा। बनतें—वन से। बसंत को सिंगारु सो—वह (रावण का कानन) वसन्त ऋतु केलिए स्वयं शृंगार था। समय—पतझड का समय। पात—पत्ते। बात—वायु। मार को—कामदेव का। बिहारु से—विहार स्थल के समान। बनाउ बनावट। रागबस—राग के वशीभूत। भो—हो गये। सो—भी। बिलोकि—देखकर। तर—तले। मेघमास—मेघों का समूह। बनपाल–बाग के रक्षक। नीकें–अच्छी तरह। जातुधान–राक्षस रावण।

पैठो—प्रवेश किया। तहस—नहस कियो—नष्ट भ्रष्ट कर दिया। तमीचर—राक्षस लोग। बसन—वस्त्र। बटोरि—संचित कर। बोरि-बोरि—डुबा डुबाकर। खोरी-खोरी—गली गली। धाइ—दौड।

पृष्ठ तैसो—वैसे। कौतुकी—खिलाडी। कूर—कायर। तारी—ताली।
३७ गारी—गाली। निसान—नगाडे। तूर—तुरही। बालधी—पूँछ। बिंधिकी—विन्ध्यपर्वत की। दवारि—दावाग्नि। किधौं—अथवा। कोटिसत—सौ करोड। बाल जाल—बालकों का समूह। निबुकि—निकलकर। मेरुतें—मेरु पर्वत से। कँगूराँ-कंगूरे पर ठाढो—खडे हो गये। बालधी—लंबी पूँछ। हहरात—थर्रा जाते थे। भट—वीर लोग। तेजको निधानु—तेज के पुंज। कृसानु—अग्नि। भानु—सूर्य। रिस—क्रोध।

लीलिबेको—निगलने को। रसना—जीभ। ब्योमबीथिका—आकाश-मार्ग। भूरि—अनेक। तरवारि—तलवार। उघारी—निकाली। सुरेस चापु—इन्द्रधनुष। दामिनि-कलापु—बिजली का समूह। कृसानु-सरि—अग्नि की नदी। जातुधान—राक्षस। अकुलानो—व्याकुल होकर। प्रजारिहै—प्रकृष्ट रूप से जलायेगा।

३८ बुबुक—लपट। बुब्रुकारी देत—पुकारते हैं। निकेतु—घर। धावौ भागो। ढोटा—छोटे। छोहरा—लडका। भोडे—गँवार (भोले भाले)। हाथी छोरौ—हाथी खोलो। महिषवृषभ—भैंस और बैल। छेरी—बकरी। धरो—पकडो। सेल—बरछी। पास—फाँसी। भाजन—बरतन। धीर—धीर लोग। धरें—धारण किये हैं। सौंज—सामग्री। समिध—ईंधन। जग्यकुंडु—यज्ञकुंड। पुंगीफल—सुपारी।

जव---जौ। धान---धान्य। स्रुवा---स्रवा। बलमूल प्रतिकूल हवि ---बलवान् शत्रु हवि हैं। हुनैं--होम करते हैं।

गाज्यो--गरज पडे। गाज ज्यों--बिजली (बादल) के समान। भाजे --भाग गये। धावौ--भागो। धरौ--पकडो। जातुधान धारि-- राक्षसों की सेना। बारिधारा उलदै--पानी उडेल दिया। जलदु जौन सावनो--जैसे सावन का बादल पानी बरसा रहा हो। झहराने --लपटें शब्द के साथ जलने लगीं। हहराने बात--हवा शब्द के साथ बहने लगी। भहराने--घबराये। प्रबल परावनो--भारी भगदड।

पृष्ठ ३९ ढकनि ढकेलि--धक्का देकर। पेलि सचिव चले लै ठेलि--मंत्री लोग उसे खींचकर ले चले। सिंघनादु--सिंहनाद। सविषाद--चिन्ता के साथ। मारुतु--वायु को। बडाई--विशालता में। बावनो-- भगवान बामन को। सयाने--समझदार। साहेबु--स्वामी (यजमान)। अबै आवनो--अभी आना बाकी है।

जाति हैं परानि--दौडी जाती हैं। गति जानी गजचालि है---गज की सी चाल से ही उनकी गति पहचानने में आती है। बिसारैं---भूल जाती हैं। सुखाने---सूख रहा है। क्योंहू--किसी प्रकार भी। पालि है---रक्षा करेगा। मँदोवै--मँदोदरी। मीजि हाथ---हाथ मलती है। धुनि माथ --माथा धुनकर। काहूँ कान कियो न---किसी ने कान न दिया (न सुना)। बापुरें---बेचारे। घने घर घालिहै--- बडे घरों को चौपट करेगा। आन्यो---ले आये। हारसों---उपवन से। निपट---बिलकुल। काहूँ--कोई। छडाइ---छुडाया। कुल के कुठारसों---कुल के कुठार मेघनाद से।

पृष्ठ अनेरे—अन्यायी। मेलैं गरे—गले मिलाता है। छुराधार—छुरे की
४० धार। बिगोवै—बिगाडती है। दाढीजार—एक गाली (मेघनाद की ओर संकेत है)। डाढत—जलती हुई। मीजि मीजि हाथ—हाथ मल रही हैं। धुनैं माथ—सिर धुन रही है। दसमाथ-तिय—रावण की स्त्रियाँ। तिलौ—तिल भर भी। अगार को—घर का। असबाब—वस्तुयें। डाढो—जल गयीं। काढो—निकाला। जिय की परी—सबको जी की पडी थी। [प्राणों की चिंता थी]। सहन-भँडार को—घर आँगन को। सँभारै—सँभालेगा। बयो—बोया हुआ। लुनिअत—काट रहे हैं। भोंडे—गँवार। बढाई—बढा रखी हैं। बादि—व्यर्थ में ही। सालतें—शाल वृक्ष से भी। बाहैं—भुजायें। याहीं—इसी। बालिसों—बालि से। कोट ओट—किले प्राकार। अटनि—अटारी। पौरि—दरवाज़े। खोरि-खोरि—गली गली में।

४१ बाल धी—पूँछ। फिरावै—घुमाकर। झहरावै—झाडते हैं। झरैं—झड रही हैं। पघिलाइ—पिघलाकर। पाग—चासनी। पागि है—पागेंगे। न लागि है—न भिडेंगे। धीयको—लडकी को। माय माता। बार—बाल। उघारे—नष्ट हो गये हैं। बारे-बूढे—बालक बूढे। हय—घोडे। हिहिनात—हिनहिनाते हुए। घहरात—चिंघार करते हैं। ठेलि-पेलि—धक्कों से ढकेलकर। तौंसि अत—जलते हैं। झौंसिअत—झुलसते हैं। झारहीं—तप्त होते हैं। काहि—किसे। ललात—लालायित। परे पाइमाल जात—सब तबाह होते जाते हैं। निबाह—बचाओ। पराहि—भाग जा। बेहाल—परेशान। चख—आँखें।

पृष्ठ अटनि—अट्टालिका। पवरि—दरवाज़ा। पगार—चार दीवारी।
४२ अधऊर्ध—ऊपर नीच। बिदिसि-दिसि—दिशा-विदिशाओं में। तिलोकिएँ—तीनों लोकों में। हिय में—हृदय में। उघारें—खोलने पर। ठाढ़ो—खडा हुआ। धाइ-जाइ—दौड जाते हैं। कोकिए—पुकारने पर। सिखाबो—सिखाना। सतराइ जाइ—चिढाता जाता है। धौंज करें—दौड लगाते हैं। काढौ सौंज—असबाब निकालो। औंजि—ऊपर से। गाढे परें—विपत्ति में पडे। डाढत हीं काढे—जलते निकाले जाते हैं। ठाढे—खडे होकर। नीकें हाथ लाए—खूब हाथ लगाया। न छाडै—न छोडता। औरै—और प्रकार की। सिंधु सावनो—समुद्र तथा सावन का मेघ भी। बावरे—पागल। रावरे—आपके, तुम्हारे। रजाइ—राजाज्ञा। प्रलय पयोद—प्रलय कालीन बादल। जूथ जोरि कै—दल बटोरकर। धाइ आए—दौडे आए। बरत—जलती हुई। बुताओ बेगी—जल्दी बुझाओ। महाबारि—समुद्र में। बोरि कै—डुबाकर। पाथप्रदनाथ—मेघों का स्वामी। घोरि कै—गरज कर। जीवनतें—जल से। चपरि—चपलता पूर्वक। भभरि—घबराकर। मुखु मोरिकै—मुख मोडकर।

४३ जरे जात—जले जाते हैं। गरे गात—शरीर गल जाते हैं। जुग-षट भानु—बारहों सूर्य। प्रलय कृसानु—प्रलय की अग्नि। सेष-मुख-अनल—आदिशेष के मुँह की ज्वाला। सलिलु सर्पो समान—जल को घृत के समान जलाने वाला। अचुरिजु—आश्चर्य। ईस-बामता-बिकार—ईश्वर की प्रतिकूलता का विकार है। पावकु—अग्नि। जमु—यम। डँवाडोल हैं—काँपते रहते हैं। साहेबु—स्वामी। बिरंचि—ब्रह्माजी। तिलोक—त्रिलोक। दूजो—दूसरा। ओल हैं—गिरवीं

हैं। ईस नामको—ईश्वर नाम का। रावरे के बावरे से बोल—पागलों के से वचन। भूमि भूमिपाल—पृथ्वी में जितने राजा हैं। नाकपाल—स्वर्ग के अधिपति। जेते—जितने। सुभट—वीर। रावरे अकाजु आनै—अपकार सोचने वाला। रामकोहु—राम का क्रोध। को—आपको। कीसु—वानर ; ब्याजु—बहाना। जारत पचारि—ललकारते हुए जला रहा है। फेरि—फेरि-घूम फिरकर।

पृष्ठ पान—अनेक प्रकार के पेय पदार्थ। सँधानो—अचार। सीधो—
४४ दाल, चावल आदि। बखारहीं—बखार में ही। पीठ—सिंहासन। जरे भरे भारहीं—भार भरे हुए जल रहे हैं। बाढें—बढने से। काढ़े तहाँ डाढे—जहाँ निकालकर रखी गयीं, वहीं जल गयीं। पगारु—दीवार। हथसार—हाथीखाना। घोर सारहीं—घुडसाल में ही। बाट—बाजार। हाटकु—सोना। कराही—कडाहा। तलफति—खदक रही है। तायसों—ताप से। भायसों—प्रेम भाव से। पाहुने—दावत। जेंवाए—भोजन कराया। चायसों प्रेम से। गारि—गालि। सुरारि—रावण। बिराट-उर—बिराट पुरुष के हृदय में। सुख राँक सो—सुखों से हीन होता जाता था। बिसोक—शोक रहित। औत—चैन। मनाक थोडा। रजाइतें—आज्ञा से। रसाइनी—रसवैद्य। सोधि—ठीक करके। सरवाक—दीया। बुट—बूटियाँ।

४५ जारि-बारि—जला करके। कै बिधूम—धूमरहित कर। बुताइ लूम पूँ—छ को समुद्र में डुबाकर। सहिदानि—चिह्न। असीस—आशीर्वाद। छोरि कै—उतार कर। बिहात दिन—दिन कट रहे हैं। निहोरि कै—समझाते हुए। जानिबे न—मालूम न होगा। ऐहैं—आयेंगे।

कटकु—सेना। डफोरि कै—चिल्लाकर। दससीस-करि-केसरी—रावण रूपी गजराज केलिए मृगराज समान। प्रसंन भई—प्रसन्न हुई। अछधारि—अक्षय कुमार। प्रताप भानु—भानु सो-प्रताप रूप सूर्य की किरण के समान।

पृष्ठ कोकनद—कमल। कोक—चक्रवाक। अंकमाल—आलिंगन करना।
४६ पगधूरि—चरण धूलि। भो विगत-स्रम-सूल है—थकावट दूर हुआ। आनैं—लाते हैं। सिधि—सिद्ध होते हैं। ताकें—उसको। चायसों—चाव से। सिरानो—समाप्त हुआ। पेलि पैठे—धक्कामुक्को करते हुए घुस गये।

४७ देवान गे—दरबार में गये। घाय—घाव। रज—तेज को निधानु—राजसी तेज का खान। सौंज—सामग्री। सकेलि—संचित कर। चाकि राखि—सीमा बाँधकर। जाँगरु—भूसा। जहानु—संसार। तीसरों उपास—तीन दिन के उपवास के बाद।

बाल-छवि

४८ द्वारें—द्वार पर, दरवाज़े पर। सकारें—सबेरे। लै—लेकर। निकसे—बाहर निकले। अवलोकि—देखकर। हौं—मैं। सोच-विमोचन—समस्त शोकों का हरण करनेवाले। मन-रंजन—मन को मुग्ध करनेवाला। रंजित अंजन—अंजन लगाये हुए। सुखंजन-जातक—सुन्दर खंजन पक्षी के बच्चे। समसील—समान रूपवाले। उभै—उभय, दो। सरोरुह—कमल। पग—पैर। करकंजनि—कर कमलों पर। पहुँची—हाथ का एक आभूषण। हिएँ—छाती पर। कलेवर—शरीर। झँगा—बच्चों के पहनने का कुरता। नृपु—राजा। लिएँ—लेकर। मरंदु—मकरंद। भृंग—भ्रमर। पिएँ—पीकर।

मों--में। बस्यो--बसा। जग में फलु कौन जिएँ--जग में जीने से क्या फ़ायदा ?

पृष्ठ दुति--द्युति, शोभा। कंज--कमल। मंजुलताई--मंजुलता, सुन्दरता।
४६ हरैं--हरण करता है। सोहत--शोभा देता है। छबि भूरि--बडी शोभा। अनंग--कामदेव। दमकैं--दमकता है, चमकता है। दँतियाँ दुति--दाँतों की चमक। किलकैं--किलकारी भरते हैं। अवधेस--अयोध्यापति दशरथ। बिहरैं--बिहार करें।

बाललीला

५० मागत--माँगते हुए। कबहूँ--कभी। आरि करैं--हठकरता है। निहारि--देखकर। रिसि आइ---रूठकर। हठिकै--हठ करके। लेत सोई जेहि लागि अरैं---जिसके लिए अडे उसको लेते हैं। अर्थात् जिस चीज़ को लेने केलिए हठ करते हैं उसे लेकर ही छोडते हैं। वर दंत की पंगति---सुन्दर दाँतों की पंक्ति। चपला---बिजली। घन---बादल। चपला......अमोलन की---रामचन्द्र के श्यामल शरीर पर अमूल्य मोतियों की माला मेघमाला के बीच बिजली की चमक के समान शोभायमान थी। धुँघरारि लटैं---घुंघराले बाल। नेवछावरि प्रान करैं---प्राणों को न्योछावर करता हूँ।

५१ पनहीं---जूतियाँ। धनुहीं---छोटा धनुष। सर---शर, बाण। पंकज -पानि---कर कमल। सरजूतट---सरयू तट। चौहट---चौराहा। हाट---बाज़ार। खर---गधा। सूकर---सुअर। स्वान---कुत्ता। बर तीरहिं तीर---(सरयू के) सुन्दर किनारों पर। निषंग---तरकस। कटि---कमर। पीत---दुकूल---पीतांबर। फब्बै---शोभा देता हैं। औसर---अवसर। दस चारि---चौदहों भुवन। नौ---नव खण्ड।

तीन---तीन लोक । इकीस---इक्कीस ब्रह्मांड । भारति---देवी सरस्वती । पबै---पावै । तुलसी......उपमा न पबै---तुलसी कहते हैं कि देवी सरस्वती राम के सौन्दर्य की उपमा देने केलिए चौदहों भुवनों, नवों खंडों, तीनों लोकों और इक्कीस ब्रह्माण्डों में खोजने पर भी उचित उपमान पा न सकीं ।

विनय

पृष्ठ सुवन--पुत्र । विनायक---विघ्नों को हटानेवाले । मुद---आनन्द ।
५२ वारिधि---समुद्र । बसहिं---निवास करें । जाँचिये---याचना करें । आन--अन्य । आरति-हर---कष्टों को हरनेवाले । जुर---ज्वर । जरत---जलते थे । पन---प्रण । लागि---केलिए । मारेउ---मारा । श्रुति---वेद । अपने पुर--शिवजी का अपना पुर, काशी । कहँ--को ।

५३ खरो--खरा, श्रेष्ठ । खोटो---खोटा, तुच्छ । कहावौं---कहलवाता हूँ । एतो---इतना । भौ---तो भी । पाथ--जल । बोरत--डुबाता है । पाथ......सींचो--तिनका बहुत नीच है, पर वह जल के माथे पर चढ़ जाता है; अर्थात् पानी के ऊपर ऊपर तैरता रहता है । अपने ही द्वारा पाला-पोसा हुआ समझकर पानी उसे डुबाता नहीं है । उसी तरह मैं नीच से नीच हूँ, राम मुझे अपना ही पाला-पोसा समझकर मेरी रक्षा करते हैं । जीव जड़--मूर्ख जीव । जोहै---देखो । जामिनी--रात । संसृति-संताप--संसार के कष्ट । बुड्यो---डूबता है । मृग बारि--मृग तृष्णा का जल । जेवरी---रस्सी । ताय---ताप । तीनों ताय---आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक ताप । कबहूँ--कभी । लूगा--कपडा । नीके--अच्छी तरह । लहत हौं--पाता हूँ । निगड़---बेडी । साँसति--कष्ट ।

पृष्ठ ह्वैहौं---होउँगा। मींजो---ठोंका, थपथपाया। पोच---नीच। बरेखी
५४ चाहता हूँ। प्रतीति---विश्वास। पाप-पुंज-हारी---पाप-पुंजों का नाश करनेवाला। ठाकुर---मालिक। हितु---हितचिन्तक। परिहरि---छोडकर। बारि---जल।

५५ सेन---बाज। छति---क्षति, हानि। बिसारि---भूलकर। नसानी ---नष्ट हुआ। सिरानी---बीत गयी। न खसैहौं---नही गिरने दूंगा। परबस......हँसैहौं---जब तक मैं इन्द्रियों के वश में था तब तक मुझे परवश जान कर इन्द्रियों ने मेरी हँसी उड़ायी। पर अब मैं ने इन्द्रियों को जीत लिया है, इन्द्रियों से हँसी नहीं कराऊँगा। पन कै---प्रण कर के। गीध---गृध्र, (जटायु)। गुन-गरु आई---गुण का गौरव। पहुनाई---आतिथ्य। सिर नाइ---सिर नवाकर। प्रेम कनौड़ो---प्रेम के वश रहनेवाला। रिनी---ऋणी।

५६ कहा जाता है कि परिवार के लोगों से, भक्ति के मार्ग में बाधा देखकर मीराबाई ने तुलसीदास के नाम पत्र लिखकर पूछा था कि अब मेरा कर्तव्य क्या है। इसके उत्तर में तुलसी ने यह पद लिखा था।

महतारी---माता। नाते नेह......कहाँ लौं---राम के प्रति स्नेह और संबन्ध के आधार पर ही सुहृद और सुसेव्य लोगों को पहचाना जाता है। जिस अंजन के लगाने से आँख ही फूट जाय उस अंजन से क्या फायदा? मैं बहुत क्या कहूँ? एतो मतो हमारो---हमारा यही मत है।